मानसरहस्य ।

जिसे
काशीनिवासी सरदार कवि ने श्रीमन्महा-
राजाधिराज स्वर्गवासी महाराज ईश्वरी-
प्रसादनारायणसिंह बहादुर G. C. S. I.
की आज्ञा से श्रीगोसाँईं तुलसीदास
जी महाराज की कविता के रसियों
के लिये रचा
और जिसे
श्रीयुत राधारमणकृपापात्र गोस्वामी
दम्पतिकिशोरजी की कृपा से पाकर
रामकृष्णवर्म्मा ने

काशी
भारतजीवन यन्त्रालय में प्रकाश किया ।

सन् १८९५ ई० ।

मूल्य ।)

श्रीकृष्णाय नमः ।

मानसरहस्य

एक दिवस श्रीमहाराजमणिमुकुट काशीनरेस की सभा में अनेक कवि कोविद के साथ यह चर्चा होत रही कि देखो वेद ने तीन को निरूपन कीनो। कर्म, ज्ञान, भक्ति। तामे कोई कही ज्ञानसाधन भक्तिनिमित्त है। अरु काहू कही की नाहीं भक्तिसाधन ज्ञाननिमित्त है। तब कोई उत्तरकाण्ड श्रीगोसाँईजी को कियो ताकी एक चौपाई पढ़ उठे कि—"ज्ञानहि भक्तिहि नहि कछु भेदा। उभय हरै भव सम्भव खेदा॥" सो सुनि श्रीरामकृपापात्र महीपालपालन सत्कुलसालन दारिद्रघालन महाराज ने आज्ञा दई कि यह जो रामचरितमानस गुसांईजी ने कीनो श्रुति सम्मत सहित सब ते अविरोधी रामभक्ति दृढ़ करन हेतु है

काहे याको मङ्गल वस्तु निर्देस है। "नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।" तो अन्य ते संहिता काव्यभाव ताको न जान के जे रामायन में प्रवेस करत हैं ते बड़े पण्डित हैं। याते एक तिलक याको ऐसो बनै कि जासे श्रुतिसम्मत बनो रहै । अरु कवि सम्प्रदाय से विरोध न होय अरु क्षेपक भी जानो जाय औ जो पद कठोर हैं तिनको व्याख्या भी होय अरु मानस वरेव कवित गुन जाती । सो ता निमित्त सर्व अङ्ग काव्य के भी होहिँ । जैसे बाल में—"नयन अमी दृग विभञ्जन । नाम रूप दुइ ईस उपाधी ॥ धिग धर्म्मध्वज धंधक धोरी । गौतमतियगति सुरति करी ॥" इत्यादि—सातकाण्ड के तिनको व्याख्या । औ जो बड़े महाराज रामचरितमानसरसिक ने बड़े तलास ते बहुत पण्डित कविन के सङ्गत ते पोथी शुद्ध कराई ताको पाठ रहै । औ गोसांई के ग्रन्थवाले उदाहरन । जाते सब कोई काव्य

जान रामायन को अर्थ जानैं अरु सब को स्वार्थ होय ऐसो तिलक बनि जाय ताते काव्य रीत लिखियतु है।

अथ काव्यलक्षण रस रहस्य – दोहा।

जग ते अद्भुत सुखसदन सब्द रु अर्थ कवित्त।
जग ते अद्भुत सुख लोकोक्ति चमत्कार ॥

दोहा।

सरल कवित की रतिविमल सो आदरहिँ सुजान।
सहज वैर विसराय रिपु जो सुनि करहि बखान॥

काव्य प्रयोजन।

जस सम्पति आनन्द अति दुरित न डारै खोइ।
होइ कवित्त ते चातुरी जगत राम बस होइ ॥

जस।

सुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई।
विमल जसहि अनुहरह सु बानी ॥

यहांलौं सम्पति।

त्राहि त्राहि आरतहरन सरन सुखद रघुबीर।

आनन्द।

भयो हृदय आनन्द उछाहू।

रुज नाम ।

निजगिरापावनकरनकारनरामजसतुलसीकह्यो।

चातुरी ।

रीझेउ तोरि देखि चतुराई ।

वसीकरन ।

विनय प्रेमवस भई भवानी ।

इत्यादि जानि लीजै—

अथ काव्य ।

चित्त को कारन—शक्ति, व्युत्पत्ति, अभ्यास ।

लक्षण ।

शक्ति जो है विमल प्राचीन संस्कार जन्य होति है व्युत्पत्ति काव्य जानने ते। अभ्यास जो काव्य जाननहार की सिक्षा वा करने ते होय।

शक्ति यथा ।

जापर कृपा करहि जन जानी ।

कवि उर अजिर नचावहि बानी ॥

व्युत्पत्ति

धुनि अवरेख कवित गुन जाती ।

अभ्यास ।

भनित मोर सब गुनरहित ।

सो तीन रीत की—उत्तम, मध्यम, अधम।

लक्षण।

जीर सरस पुन देह सम देहै वल जेहि ठौर।

उत्तम में विङ्ग अधिक, मध्यम में विङ्ग वाच्य बराबर, अधम में वाच्यार्थ मात्र।

उत्तम यथा।

सहसनाम मुनि भनित सुनि तुलसी वल्लभ नाम।
सकुचितहियहँसिनिरखिसियधरमधुरम्धरराम॥

यहां जानकी तुलसी के वल्लभ सुनि हँसी राम संकोच ते उपपति विङ्ग।

मध्यम।

जाना मरम नहात प्रयागा।

प्रयाग नहात सङ्कल्प ते जानी॥

भरत नाम ते प्रेम अधिकाई।

सो वाच्य की बराबर है।

अधम।

जामे विङ्ग नाहीं सो द्वै रीत की—शब्दचित्र, अर्थचित्र।

शब्दचित्र यथा।

अंभोज अंबक अंब उमग सुअंग पुलकावलि छई।

यहां अनुप्रास को चमत्कार है ।

अर्थचित्र यथा ।

नमामि भक्तवत्सलं—

यामे अर्थ चमत्कृत है ।

शब्दार्थ निर्णय ।

जो सुनिये सो शब्द है अर्थ जु समुझै चित्त ।

सो शब्द दो रीत को—धुन्यात्मक, वर्णात्मक। धुन्यात्मक जो बाजा ते निकसे, वर्णात्मक तीन रीत को ।

दोहा ।

वाचक लक्षक विङ्ग को शब्द तीन बिधि सोय ।
वाच्य लक्ष अरु विङ्ग पुनि अर्थ तीन विधि होय॥

वाचक लक्षण ।

वाचक जो ससहाय बिनु आप अर्थ कहि देय।
वाच्य अर्थ पद सुनतही जाहि चित्त गहि लेय॥

यथा ।

जल संकोच विकल भइ मीना ।

जल सुनत पानी को ज्ञान भयो याही सों वाच्यार्थ कहत हैं । जासो लखिये यह अरथ

अभिधा सो व्यवहार। याही सों शक्ति कहत हैं।

दोहा।

या पद ते एहू अरथ जानो ऐसो रूप।
जो इच्छा भगवान की सो है शक्ति अनूप॥

यह अविधा को तत्व लच्छन कह्यौ, अरु वाचक के चार भेद॥

काव्यनिर्णय दोहा।

जाति जदृच्छा गुन क्रिया नाम सु चार प्रकार।

जाति यथा।

देवदनुज भूपति भट नाना।

देव मे देवत्वजाति, दनुज में दनुजत्वजाति।

जदृच्छा यथा।

भइया कहहु कुशल दोउ बारे।

गुन यथा।

स्यामल गौर धरे धनु भाथा।

क्रिया यथा।

भये बहुरि सिसु रूप खरारी।

लच्छक।

मुख्य अर्थ को बाध जहँ शब्द लाच्छनिक होय।

यथा ।

अहो मुनीस महाभट मानी ।

लक्षनालक्षन ।

मुख्य अर्थं के बाध तें पुनि ताही के पास ।
और अर्थं जाते बनै कहैं लक्षना तास ॥

लक्षनाबीज, तातपर्यानुपपत्ती, अन्वयनुपपत्ती, तथापि तातपर्ज न मिलै यह मानत, सो दो रीत की। एक निरूढ़ी एक प्रयोजनवती, जासें ध्वनि नाहीं सो निरूढ़ी, अरु जासें ध्वनि होय सो प्रयोजनवती ।

निरूढ़ी यथा ।

बूझब राउर सादर साईं ।
कुशल हेतु सो भयो गुसाईं ॥

इहाँ कुशलवारे को कुशल कहो चाही सो आनन्द अर्थं कीनो ।

प्रयोजनवती ।

"लिये चोर चित राम बटोही" तो चित धन नाहीं जाको चोरी होहि याते मुख्यार्थं बाध करि आपन आसक्तता सूचित करी प्रयोजन यह

अति सुन्दर है। और प्रयोजनवती के द्वै भेद। प्रथम उपादान ताको लच्छन काव्यनिर्णय—"उपादान सो लच्छना परगुन लीन्हे होइ" यथा "तब चले बान कराल" तो बान आप ते नाहीं चलत पुरुष चलावनहार को गुन लीनो।

लच्छितलच्छनालच्छन॥

"निज लच्छन औरहि दिये लच्छलच्छना जोग"। यथा—"वीच बास करि जमुनहि आये"। तो जमुना मे आइबो असम्भव है याते तीर से आये यह लच्छना जमुना शब्द ते आपनो सीतल पावन गुन तीर को दयो। अरु द्वैद्वै भेद शुद्धागौनीके। सारोपा, साध्यवसाना, ताके लच्छन। जहां जाको आरोप कीजै अरु जामे आरोप कीजै सो दोई पद पाइये सो सारोपा। और जासें आरोप कीजै सोई पद पाइये सो साध्यवसाना। तामें द्वै भेद। गौनी, शुद्धा। जहां बरा बरी को सम्बन्ध होय सो गौनी, और जहां और सम्बन्ध होय बाचक सो कै कारज सो सुद्धा।

गौनो सारोपा यथा ।

"विधु-बदनी मृगसावक लोचनि"। तो इहाँ बिधु मृग शब्द विधु मृग में है परन्तु अपने गुनन की प्रतीत मुख लोचन मे करावत है।

सुद्धासारोपा यथा ।

रघुबंसिन कर सहज सुभाऊ ।
मन कुपन्थ पग धरै न काऊ ॥

इहाँ रघु को जो कीनो धर्म ताको पालनो यह सम्बन्ध ते सुद्धा। धरम को आरोपन वंसिन मे सो दोइ पाए याते सारोपा ।

गौनोसाध्यवसाना यथा ।

"मुकुर मलिन अरु नयन विहीना"। इहाँ शास्त्र को आरोप मुकुर मे अथवा कर्म को सो कर्म न पायो अरु ज्ञान को आरोप नयन में सो ज्ञान भी न पायो याते साध्यवसाना। औ नेत्र ज्ञान बराबरी ते गौनी ।

अथ सुद्धासाध्यवसाना ।

'मायाबस परछन्न जड़ जीव कि ईस समान'

तो इहाँ संसार को आरोप माया में सो माया साच पाई, अरु माया ईश्वर की है या सम्बन्ध ते शुद्धा, अरु लच्छना के भेद सब ८० होत हैं सो ग्रन्थवृद्धि के भय ते नाहीं लिखे।

दोहा।

प्रथम भेद है सुद्धही गौनी सुधि के चार।
ए ऐसी विधि जानिये छै लछना प्रकार॥

अथ विंजना।

अर्थ बनाय कहै अधिक विंजक कहिये सोइ।
शब्द सुनै समझै अरथ होहि जु बिमल विकास।
सोई विंग जु लच्छना अविधासूल विलास॥

लच्छना सूल विंग में लच्छना को फल विंग जानिये। अभिधामूल विंग में और अर्थन की प्रतीति सो विंग जानिए।

विंगहि कहै सुव्यंजना ह्वय सबहि सुख देय।

सो विंग दो भाँति की। लच्छनामूल। अविधा मूल। सो लच्छनामूल दो रीति की। गूढ़, अगूढ़ ताको लच्छन।

कवि सुहृदय जाको लखै विंग सुकहिये गूढ़ ।
जाको सब कोऊ लखै सो पुनि होय अगूढ़ ॥

गूढ़ विंग यथा ।

विप्रबंस की अस प्रभुताई ।
अभय होहिँ जे तुम्हे डराई ॥

इहाँ हम आप को नाहीं डरात आप के ब्राह्मणत्व कों डरात यह लच्छित लच्छन ते तुम्हे मारने ते दोषभागी यह विंग ।

अगूढ़ यथा ।

माता पितहि चरित भए नीके ।
इहाँ माता-द्रोही विंग सो प्रगटही है ।

अभिधामूल लच्छन ।

बहुत अर्थ के शब्द को जोगादिक अनुकूल ।
अर्थ नियम तहँ कीजिये विंग सु अविधामूल ॥
कहुँ संयोग बियोग कहुँ कहूँ कहै पुनि संग ।
कहुँ बिरोध कर अर्थ कहुँ प्रगटत विंग प्रसंग ॥
और शब्द के साथ पुनि चिन्ह समै अरु देश ।
ए औरै पुनि जानिए शक्ति विंग के भेस ॥

संयोग यथा।

भाल तिलक श्रमबिन्दु सुहाए।

इहाँ तिलक के संयोग ते भाल लिलाट जानिए।

सहचरी यथा।

रामवियोग कहा सुनि सीता।

इहाँ दासरथी जानिए।

सहचारी यथा।

राम लखन सिय कानन बसहीं।

इहाँ भी दासरथी लखन सहचारी ते।

विरोध यथा।

बार बार मुनि विप्रवर कहा राम सन राम।

इहाँ दासरथी परसुधर जानिए याही रीति ते आन जान लीजे।

अर्थ जु तीन प्रकार के व्यंग सबन ते होत।

वाच्य व्यंजकता यथा।

तो पद पदुम पखारन कहहूं।

इहाँ पदपषार तर्पनादिक कर्म करो चाहत सो वाच्य ते जानी जात पितृतारन व्यंग।

लक्षक विंजकता यथा ।

धर्मसीलता तव जग जानौ ।

इहाँ बिपरीत लच्छना करि तू अधर्मी है ।

व्यंग व्यंजकता यथा ।

बन्दौं राम नाम रघुबर को ।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥

इहाँ कृसानु भानु हिमकर शब्द ते ब्रह्मा बिष्णु महेस प्रथम व्यंगता ते उत्पति पालन संहारकर्त्ता, द्वितीय व्यंग । अब केवल अर्थही ते व्यंजक होत है सो कहत हैं ।

लच्छन ।

व्यंजक शब्द सहाय तें अर्थ जु व्यञ्जक होय ।
कहूं कहूं तिहि ठौर में प्रगट गनाऊँ सोय ॥
बक्ता बरन सुकाकु पुनि बचन अर्थ के संग ।
सभा रूप ढिग और के प्रगटत व्यङ्ग प्रसंग ॥
देस समय मिलि के कहौं नौ बिधि में कविराज ।
व्यंग्य होत बहु अर्थ तें लखत सुबुद्धि समाज ॥

बक्ता बसिष्ट यथा ।

कत सिख देइ हमै कोउ माई ।

इहाँ वक्ता मंथरा के वचन सें व्यङ्ग है ।

राजनासकारनक्षया छ्नावत ।

बोद्ध यथा ।

पुनि आउव यहि बिरिया काली ।

इहाँ बोद्धा जानकी पै व्यङ्ग ।

काकु ।

राम मनुज कास रे सठ बंगा । का राम मनुज हैं ?

अन्य सन्निध ।

सीमहिँ राजकुँअरिछबि देखी ।

इहाँ आपुस में कहि नारद को सुनावत ।

वाच्य ।

कुपथ मांगु रुज व्याकुल रोगी ।

बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी ॥

समय यथा ।

उदय अरुन अवलोकहु ताता ।

इहाँ प्रात सूचित ।

काहू काहू चेष्टा ते भी कहत हैं ।

यथा ।

खंजन मंजुल तिरछे नयना इत्यादि ।

अथ ध्वनिक लच्छन ।

मूल लच्छना है जहां गूढ़ व्यंग परधान ।
सोउ ध्वनि दोभांति की कहत सकल कबिराज ।
अविबिच्छित इक दूसरी कहत बिबिच्छित साज॥

अविबिच्छित लच्छणा का निर्णय ।

बक्ता की इच्छा नहीं बचनहि को जु प्रभाव ।
व्यंग्य कहैं तेहिबाच्य को अबिबिच्छित ठहराव ॥

यथा ।

'कहै सु सेवक बारहिंबारा' । इहाँ ते,
'सब सेवकगन गरहिं गलानी' । इहाँ लौं,
बक्ता भरतवाच्य बेचान हम चाहिहैं सो लच्छन लछना ते जानो जात, सेवक स्वामि भाव व्यंग ते सेवकन को ग्लानि भई यह व्यंग ।

बिबिच्छित लच्छण ।

जहाँ बक्ता की इच्छा से बिंग कढ़ै सो बिबिच्छित ।

यथा ।

बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू ।
भूप किशोर देखि किन लेहू ॥

तामे दो भेद। अर्थान्तरसंक्रमितवाच्यध्वनि, अत्यन्त तिरस्कृतवाच्यध्वनि। ताको लच्छन। अर्थ और सो मिलि रहै सो अर्थान्तरसंक्रमित।

अरु जहाँ व्यंग की अधिकाई कहिबे को वाचक अपनो अर्थ छोड़ि देय सो अत्यन्त तिरस्कृतवाच्य ध्वनि।

अर्थान्तरसंक्रमित यथा। ?

'जनु जुग जामक प्रजाप्रान से।' यामे एक प्रजाप्रान भरत के पाहरू दूजे सिष्ट रकार मकार

अत्यंततिरस्कृत यथा।

'कुन्दकली दाड़िम दामिनी'। इहाँ ते, 'गज केहरि निज करत प्रसंसा'। उहाँ तक। 'हरषे पाइ सकल जनु राजू।' तो इहाँ हरष ह्वैबो असम्भव तब वाचक ने अपनो अर्थ छोड़ो अरु साध्यावसाना ते दसनादि लीनो की उपमेय ते उपमान अनादर पावत रहे यह गूढ़ व्यंग अरु तिहारे बैरिन को हरष हम ते नाहीं सहो जात यह ध्वनि। अरु जे ध्वनि जुदा कहत ते यह

लिखत की जब व्यंग मे अधिक चमत्कार होय सो ध्वनि। याको कछू भेद बढ़ाइ के हम साहित्य सरसी मे लिख्यो है।

दोहा।

अर्थ व्यंग के क्रास को जहँ सो ध्वनि द्वै भाँति।
प्रथमहि क्रम नहि जानिये दूजो है क्रम काँति॥

जहाँ क्रम नहीं जानिये सो असंलच्च क्रम व्यंग ध्वनि कहावे। अरु जहाँ क्रम जानिये सो संलच्च क्रम व्यंग ध्वनि कहावै।

दोहा।

जेहिठाँ क्रम नहि जानिये सो ध्वनि बहुत प्रकास
नव रसभाव अनेक विधि पुनि तिनके आभास॥
सान्ति सन्धि अरु सबलता उदयभाव विधि और।
तहाँ विराजत नाम ए एहै प्रभु जेहि ठौर ॥
अलङ्कार ए होत सब जहाँ और परधान।

वार्त्ता।

जहाँ रस अंग होय मुख्य रसभावादिक होय तहाँ रसवदा अलंकार कहिये रस न कहिये।

जहाँ भाव अंग होय मुख्य कोउ और होय तहाँ प्रेयसत अलंकार । जहाँ आभास अंग होय मुख्य कोउ और होय तहाँ ऊर्जस अलंकार । जहाँ भाव सान्त्विक अंग होय तहाँ समाहित । इन के उदाहरन मध्यम काव्य के प्रसंग में कहैंगे ।

अब रस को रूप कहियतु है । तहाँ रस को मूल भाव है याते प्रथम भाव कहियतु है ।

भाव लक्षण ।

रस अनुकूल विकार को भाव कहत कविराज ।

यथा ।

कङ्कनकिङ्किनिनूपुरधुनि सुनि ।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि ॥

इहाँ धुनि सुनि शृङ्गार अनुकूल विकार उपजो । सो भाव चार प्रकार को । विभाव, अनुभाव, संचारी, थाई ।

विभाव लक्षण ।

जिनते जिनके जगत मे प्रगटत है थिर भाव ।
तेई नित्य कबित्त मे पावत नाम विभाव ॥

अनुभाव लक्षण ।

थिर भावन को और को प्रगटे ते अनुभाव ।
संचारी जे साथ हो बहुत बढ़ावे हाव ॥

अरु सब रस में संचरैं ते बिभाव द्वो भाँति ।
आलम्बन, उद्दीपन ।

लक्षण ।

जे निवास थिरभाव के ते आलम्बन जान ।
सुधि आवत जिनके लखे ते उद्दीप बखान ॥
आलम्बन रति के कहत नवल नारि अरु कान्त ।
उद्दीपन बहु भाँति के घन बन सरद बसन्त ॥

आलम्बन यथा ।

अस कहि फिर चितये तेहि ओरा ।
सियमुख ससि भए नयन चकोरा ॥

उद्दीपन यथा ।

प्राची दिसि ससि उये सुहावा ।
सियमुख सरद देखि सुख पावा ॥

जानकी को याही रीत । 'देखि रूप लोचन ललचाने'

आलम्बन ॥

निसहि ससिहि निन्दहि बहु भाँती ।

उद्दीपन।

सो भी दो रीत के। घनवनसरदादि दैवी, गृहवस्त्रादि मानुषो।

पट उर लाय सोच अति कीन्हा।

अनुभाव।

वचन चितैबो वक्र विधि अन जे सात्विकभाव।
आलिंगन चुम्बन जिते ते कहिए अनुभाव॥

वचन यथा।

मानहु मदन दुन्दुभी दीनी।

चितवन यथा।

प्रभुहि चितै पुनि चितै महि राजत लोचनलोल
खेलत मनसिज मीन जुग जनु विधुमण्डलडोल

सात्विक लक्षन।

बँधि रहिबो स्वरभंग पुनि कंप खेद अंसुआन।
रोम विवर्न रु अंत पुनि सात्विक भाव बखान॥

यथा।

'अधिक सनेह देहभई भोरी' इत्यादि जानिए।

अथ संचारी।

प्रथम कहत निर्वेद गलान।
संक असूया मद श्रम जान॥

आलस बहुरि दीनता चिन्ता ।
मोह असित धृति लाज अहन्ता ॥
वेग चपलता जड़ता हर्ष ।
गर्भ विषादरु नींद अमर्ष ॥
औत्सुक्य अपस्मार सोइबो ।
बोध उग्रता प्रान खोइबो ॥
शुद्धि व्याधि अवहित्था त्रास ।
उन्माद बाद पुनि तर्क बिलास ॥
संचारी तैतीस गनाए ।
नवहूं रस के संग सुहाए ॥

संचारी लक्षण ।

जेहि तेहि बिधि संसार सुख देखत उपजै खेद ।
उदासीनता जगत ते सो कहिये निर्वेद ॥
आधि व्याधि ते जो भई बलकी हानि ग्लान ।
वस्तु भावती हान ते उर पुनि संका मान ॥
अनसहिबो पर भले को सुवह असूया होय ।
मोह जु अति आनंद ते मद कहियत है सोय ॥
बहुत उतायल काज ते श्रमजु सिथिलता अंग ।
उठि न सकै ऐड़ाय तन जहां स आलस अंग ॥

होय/मलिनमन दुखन ते तब दीनता कहाइ।
चिन्ता जो प्रियवस्तु की ध्यानो करत विहाइ॥
चित्तविकलता मोह है स्मृति सुधि कर होय।
धृति संतोष बखानिये लाज सकुचिबो सोय॥
अनहोनी को होत लखि चितभ्रम सो आवेग।
काज उताइल चपलता जहँ मन है उद्वेग॥
सब कामन ते सुन्न ह्वै रहिबो जड़ता सोइ।
चित में अतिआनँद उमगि बढ़ोहर्ष तब होइ॥
सब ते सबविधि हो सरस यह चितगर्ब कहाय।
दुख ते मन अतिहीं घटै यह बिषाद को भाय॥
जहँ कछु काम न कर सकैं इंद्री निद्रा होय।
अमरष सो कहिये जहाँ क्रोध अधिक थिर जोय॥
औत्सुक्य जहँकाम को चित न सहिसकै ढील।
अपस्मार जहँ मूरछा भ्रमत विकलता डील॥
सपनो कहिये सोइबो बोध जागिबो होइ।
जग निंदन समरत्थ चित कहै उग्रता सोइ॥
प्रान मगनता मरन मति निहचै ज्ञान कहाय।
होइ जु मन संताप ते तन गद व्याधि सुभाय॥

अवहित्था जहँ लाज ते हर्ष न सोक लखाय ।
चित भ्रम सो उन्माद है डर पुनि त्रास कहाय॥
सोई तर्क बखानिये जहँ विचार वह भाय ।
संचारी तैतीस ए कहैं सकल कवि गाय ॥

अथ सभाप्रकाशे ।

भाग गति चालि रूप सोई अंग करि पुनि थाईही सें टूटे प्रगटत निरधाखौ है । निर्वेद अपस्मार मरन कहत कोई संतहू को अंग सो सिंगार सैं निवाखौ है । कौस्तुभ ग्रन्थ गोरे स्वन को तासे तें संचारी निकाखौ है ॥

भावगति ३ । तुक को अर्थ रति की गति कों चलाय देय कोप प्रगट होय भाव रति उत्साहादिता की गति को चलाय देय मानादि अंगीकार करे चौथी तुक को अर्थ निर्वेद अपस्मार मरन ये तीन संचारी करुना वीभत्सादि में होत है । अरु आन ग्रन्थ ते तीसई शृङ्गार के होत हैं सो हम साहित्य सुधाकर के मंगल में लिखे हैं ।

अथ संचारी के उदाहरण निर्वेद यथा।

अब प्रभु कृपा करहु इहि भांती ।
सब तजि भजन करौं दिन राती ॥

ग्लानि यथा।

अस कहि बचन सचिव रहि गयऊ।

हानिग्लानि संका यथा।

शिवहि बिलोकिससंकेउ मारू।

असूया यथा।

तब सिय देखि भूप अभिलाषे ।
कूर कपूत मूढ़ मन माखे ॥

मद।

रनमदमत्त निसाचर दर्प्पा ।

श्रम।

श्रमित भूप निद्रा अति आई 'याही में निद्रा'।

आलस।

रघुबर जाय शयन तब कीन्हा ।

दीनता।

पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं ।

चिन्ता।

चितवत चकित चहुदिसि सीता

मोह।

लीन्हि लाय उर जनक जानकी ।

सुमिरन ।

जब जब राम अवध सुधि करहीं ।

धृति ।

"सुनु मातु मैं पायो सकल जग राज आजु न संशयं ।"

लाज ।

गुरु जन लाज समाज बड़ देखि सीय सकुचानि ।

आवेग ।

लछमन दीख उमा कृत वेषा । चकित ।

चपलता ।

करत मनोरथ आतुर धावा ।

जडता ।

मुनि मन मांझ अचल ह्वै वैसा ।

हरष ।

हरषि राम भेंटेउ हनुमाना ।

गर्भ ।

कहुं जग मो समान को योधा ।

विषाद ।

अति बिषाद बस लोग लुगाई ।

अमर्ष ।

जीते जो भट संयुग माहीं ।
सुनु तापस मैं तिन सम नाहीं ।

औत्सुक्य ।

वेग चलिय प्रभु आनिये भुजवल रिपुदल जीत ।

मूर्छा ।

अस कहि मूर्छि परो महि राऊ ।

भ्रम ।

राम लखन सखि होहिँ कि नाहीं ।

स्वप्न ।

सपने वानर लंका जारी ।

बोध ।

प्रात पुनीत काल प्रभु जागे ।

उग्रता ।

जिते सुरासुर तव श्रम नाहीं ।
नर वानर केहि लेखे माहीं ॥

मूर्छा ।

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम ।
तन त्यागो० ।

ज्ञान ।

भयो ज्ञान उपजो नवनेहा ।

व्याधि ।

यह कुरोग कर औषधि नाहीं ।

अवहित्था ।

चकित चितव मुँदरी पहिचानी ।

उन्माद ।

कबहुँ कि पुनि पीछे फिरि जाई ।

त्रास ।

गुरु पहँ चले निसा बड़ जानी ।

तर्क ।

जब समुझत रघुवीर सुभाऊ ।

स्थाई लच्छन ।

सब भावन सरदार है टार सकै नहिँ कोय ।
सो थिरभाव बखानिये रस सरूप जो होय ॥

सभाप्रकाशे ।

जामे भाव अनेक सब होहिँ रहे छपि जाहिँ ।

रस लच्छन ।

काव्य कला धरे शंकूमते ।

दोहा ।

बिभावादि थाई यथा दोहु न मिलि के होय ।
अनुमायक मायक कहत रस सम्बन्ध सु जोय ॥

भट्टनायकमते ।

बिभावादि संयोग ते भोजक भोग्य बखान ।
जहाँ होय सम्बन्ध यह तहाँ सुरस पहिचान ॥

रसतरंगिनी ।

जहँ बिभाव अनुभाव मिलि सात्विकऔव्यभिचार ।
पूरनथाई भाव ते परपूरन संचार ॥

रसरहस्ये।

जैसो सुख है ब्रह्म को मिले जगत सुधि जात।
सोई गत रस मे मगन भये सु रसनो भात ॥

सभाप्रकाशे।

मिलि विभाव अनुभाव अरु संचारी जे आन।
उपजावत रस रुचिर यों ज्यों निज अंगन पान॥

तासे कोई कहत उत्पत्ति होत है तहाँ कोई ऐसो कहत उत्पत्ति होय तो लीला राम देखि फेर राम देखिवे की चाह नाहीं चाही अरु रस दृश्य पदार्थ चाही याते अनुमान होत है, लीला राम ते राम अनुमान भयो ऐसहीं विभावादि तें अनुमान है तहाँ आन कही अनुमान ते कारज नाहीं होत जैसे पर्वत में धूम देखि अग्नि अनुमान कीनो तहाँ पाकादि क्रिया नाहीं सिद्ध है लीला राम ते जो सादृश्य रूप हृदय मे आवै तो कार्य होय है ऐसेही रस, जैसे स्वयंभू मनु को लीला राम देखि राम प्राप्ति भये वामें कोई कहै देखनो कहाँ लिखो तो गुसाईं लिखो—

'विधि हरि हर तप देखि अपारा' इहाँ ते दे-
खहि सो सरूप लौं विचारो कैसे आनजाने
याते भोग कहो चाहौ अरु व्यञ्जक सब को मत
है यामे बहुत ग्रन्थ बृद्धि भय ते नाहीं लिखत
तहाँ प्रथम शृङ्गार लच्छन।

सभाप्रकाशे दोहा।

रम्य देश अरु चातुरी ससै आदि दै वेष ।
इनते तिय पिय चित रँजन मधुरा रति सुविशेष॥

वार्ता।

जहाँ नायक नायका संयोग चाहै सो मधु-
रा रति।

दोहा

ललित अंग संचरन तैं सो रति पाय प्रकष ।
उपजत रस शृङ्गार सो कविजन कहत सहर्ष ॥
द्वै प्रकार शृङ्गार रस कहि संयोग वियोग।
मिलिबो अनमिल आदि दै बरनत पंडितलोग॥

संयोगजथा।

"निज कर भूषन राम बनाये"। "सीतहि
पहिराये प्रभु सादर"। इहाँ राम जानकी पर-

स्पर्श आलंबन विभाव कटाक्षादि अनुभाव हर्ष संचारी रतिस्थाई याते शृङ्गार याके देव कृष्ण स्याम रंग जानिये।

अथवियोग। रसरहस्ये।

अब वियोग कहि पाँच विधि जहँ पूरब अनुराग
विरह ईरषा श्राप पुनि गमन विदेश विभाग॥

पूर्वानुराग जथा।

लोचन मग रामहि उर आनी।
फिरी अपुन यौ पितुवस जानी॥

विरह।

निसहि ससिहि निन्दहि बहु भाँती।
जुग सम भई सिरात न राती॥

ईरषा।

गौतमतिय गतिसुरतिकरि नहिपरसतिपदपानि
मन बिहसे०।

श्राप।

विरह विकल भगवन्तहि देखी।
नारद मन भा छोभ बिशेषी॥
मोर श्राप करि अंगीकारा।
सहत राम नाना दुख भारा॥

विदेसगमनयथा।

चलन चहत बन जीवन नाथा।

अथ पूर्वानुरागकी दसदसा।

नयनप्रीत १ चिन्ता २ संकल्प ३ नीदनास ४ कृशता ५ रुचिहानि ६ लाजभंग ७ उन्माद ८ मूर्छा ९ मृत्यु १०।

नयनप्रीत जथा।

देखि रूप लोचन ललचाने।

चिंता।

सुमिरि पितापन मन अति छोभा।

संकल्प।

बरौं संभु नतु रहौं कुमारी।

कृसता।

देखि उमहि तप छीन शरीरा।

रुचिहान।

पुनि परिहरे पुराने परना।

लाज भंग।

चली उमा तप हित हरषाई।

उन्माद।

तुम सम पुरुष न मोसम नारी।

इत्यादि, अरु जो शृङ्गार को आलंबनविभाव नायक नायका ताके अनेक भेद होत हैं।

नायक।

पति उपपति वैसिक त्रिविधि नायकभेदबखान।

तिलक।

पति जाते विवाह होय, उपपति आन को पति, वैसिक जाते धन की चाह रतिहेतु होहि।

पतियथा।

सोहत सिया राम की जोरी।

उपपतियथा।

छल करि टारिय तासु ब्रत प्रभु सुरकारज कीन

इत्यादि। अरु पति के भेद अनुकूलादि बहुत होत हैं। अरु नायका स्वकीया, परीकया, सामान्या। जो निज पति सों रति करै सो स्वकीया, पर पति सो प्रीति करै सो परकीया, जो धन को चाह राखै सो सामान्या।

स्वकीयाजथा।

पति देवता सुतीय महँ मातु प्रथम तव रेष।

इत्यादि बहुत भेद होत हैं।

अथ हास्यरस।

जहँ अजोग को जोग पुनि उलटो लखिये काज

बुरो रूप चितवन चलन हास बिवरन बिभाव।
मन्द मध्य अरु उच्च स्वर हँसिबो है अनुभाव ॥
हरष उद्वेग रु चपलता ते संचारी भाव।
इनते नित्य कबित्त में हास्य व्यंग जहँ होय ।
कबि सुहृदै सब रसन में हास्यरस्य है सोय ॥

यथा ।

नाना जिनिस देख कर कीसा ।
पुनि पुनि हँसत कौशलाधीसा ॥

इहाँ बानर बिभाव हसन अनुभाव हरष संचारी । हास्यव्यंग स्वेत रंग प्रथुदेव ।

अथ—करुना ।

दुखी देखिये मित्र कों मृतक आपद्युत बन्धु ।
इनते उपजत सोक लखि दारिद्युत अतिअन्धु॥
रुदन कंप अरु रोम तन ए अनुभाव बखान ।
मोह मूरछा दीनता ते संचारी जान ॥
इनते न्त्य कबित्त में सोकव्यंग जहँ होय ।
कवि सुहृदय सब रसन में करुना रस तहँ जोय॥

यथा ।

"अवगाह सोक समुद्र सोचहिँ नारि नर

व्याकुल भई" । इहाँ दशरथ मरन विभाव को उद्दीपन राम माता रुदन अनुभाव, मोह दीनता संचारी, सोक थाई, याते करुना । अरु कोई कहै करुनारस कैसे तौ अधिकारी के भेद सें रस होत है। जैसे हनूमानजू अयोध्याकाण्ड कथा श्रवन करत आनन्द कों प्राप्त होय हैं । अरु सती भी पति साथ ऐसेही वीभत्स में भीमसेन दुश्शासन को रुधिर पियो ।

अथ रौद्ररस लक्षण ।

गर्व वचन रिपु रन लखत और कढ़े हथियार ।
इनते उपजत क्रोध है ए विभाव सरदार ॥
भृकुटीकुटिल अरुअरुनदृग अधर फरक अनुभाव
गर्भ विकलता चपलता ते संचारी भाव ॥
इनते नृत्य कवित्त में क्रोध व्यंग जहँ होय ।
कवि सुहृदय सब कहत हैं रौद्ररस्य है सोय ॥

यथा ।

जो सत संकर करैं सहाई ।
तो मारौं रन रामदोहाई ॥

इहाँ इन्द्रजीत विभाव भुजादि फरकाव अनुभाव गर्भ संचारी क्रोध थाई ताते रौद्र ।

अथ वीर के विभाव ।

युद्धोद्दाक दया बहुरि धर्म सु चार प्रभाव ।
उग्र जीव जेते जहाँ ते कहिये अनुभाव ॥
वचन अरुनता वदन की अरु फूलै सब अंग ।
ए अनुभाव बखानिये सब वीरन के संग ॥

वार्ता ।

उग्रता असूया संचारी, उत्साह थाई समता की सुधि लौं वीर सम सुधि मूलते रौद्र इनमें इतनो भेद ।

यथा ।

सुनि सेवक दुख दीन दयाला ।
फरकि उठे दोउ भुजा बिशाला ॥

इहाँ वैरी के बल को सेवक दुख उद्दीपन विभाव भुज फरकाव अनुभाव आपनी उग्रता बालि के बल की तारीफ न सुहानी सो असूया उत्साह थाई याते वीर । इन्द्रदेव पीत रंग ।

अथ भयानक।

बाघ व्याल विकराल रन सूनो वन गृह देखि।
जोरावर अपराधयुत भाव भयानक लेखि॥
कंप रोम प्रस्वेद तन ए अनुभाव बखान।
मोह मूरछा दीनता ते संचारी जान॥
इनते नृत्य कवित्त में अति भय परगट होय।
कवि सुहृदय को मगनमन कहत भयानक सोय॥

यथा।

"हाहाकार करत सुर भागे।" इहाँ रावन ज़ोर, विभाव, देव, कंप अनुभाव, दीनता संचारी, भय थाई, यम देव, नील रंग।

अथ वीभत्स।

अनुभावन को देखिबो सुनिबो सुमिरन जान।
और निषिद्धक दर्ज ए ग्लान विभाव बखान॥
निन्दा करिबो कम्य तन रोम सु है अनुभाव।
दुःख असूया जानिये है सञ्चारी भाव॥
कबित नृत्य में ग्लान जहँ इनते परगट होय।
नव रस में बीभत्स रस ताहि कहत कवि लोय॥

यथा।

'श्रोनित सर कादर भयकारी' इहाँ ते राम सर निकरन हये लौं अंगी बीभत्स जानिये। तहाँ मज्जादिक विभाव अरु देखनहारन के रोम अनुभाव, असूया संचारी, ग्लान थाई, काल देव, नील रंग॥

अथ अद्भुत रस के विभाव—दोहा।

जहँ अनहोनी देखिये वचनरचन अनुरूप ।
अद्भुत रस के जानिये ए विभाव सारूप ॥
बचन कम्प अरु रोम तन ए कहिये अनुभाव ।
हरष संखचित मोहयुत ते संचारी भाव ॥
इनते नृत्य कबित्त में व्यंग आचरज होय ।
नौउ रस में जानिये अद्भुत रस है सोय ॥

यथा।

'सती देखि कौतुक मग जाता' इहाँ ते 'नैन मूंदि बैठी' इहाँ तक, तहाँ राम बिभाव, कम्प अनुभाव, संका मोह संचारी, आचरज व्यंग, कामदेव पीत रंग याते अद्भुत।

अथ सांतरसके विभाव।

सिद्धमंडली तपोवन काथा जगत समसान ।
ए विभाव अनुभाव पुनि सब में समता ज्ञान॥

ताको लक्षण।

तत्व ज्ञान ते कवित से जहँ उपजत निर्वेद ।
कहत सांतरस तासु सों सो है नवमो भेद ॥
धीरज हरष संचारी जानिये।

सोरठा।

मन हरिपद अनुराग तज कुतर्क नाना सकल।
महामोह निसि जाग सोवत वीते काल वह ॥

इहाँ नाना इतिहास विभाव, समता अनुभाव, धीरज हरष संचारी, निर्वेद थाई, विष्णु देव, स्वेत रंग, याते सांत, अरु कोई तीन रस अनुमानत दास्य सिष्य वात्सल्य अरु कोई इनहीं में भाव ध्वनि मानत दास्य में देव रति-भाव ध्वनि सिष्य में मित्र रतिभाव ध्वनि वात्सल्य में पुत्र रतिभाव ध्वनि।

भावध्वनि लक्षण।

संचारी ए व्यंग के देवराज रति होय।
जहँ प्रधानता करि कहत भाव धुनि है सोय॥

संचारीभाव ध्वनि यथा।

जब जब राम अवधसुधि करहीं।
तब तब वारि बिलोचन भरहीं॥

इहाँ अवध सुमिरन।

देवरति यथा।

भरत सुभाव न सुगम अगमहूँ।

इहाँ कवि उक्ति देवता विषै है।

राजरति यथा।

हम सेवक स्वामी सियनाहू।

मुनि रति।

'भानुवंस भय भूप घनेरे' इहाँ ते असीस लौं।

पुत्ररति यथा।

लोचनओट राम जिन होऊ।

भ्रातरति।

"सीतारामचरन रति मोरे।" ऐसही और जानिये अरु जहाँ अनुचित रस होय तहाँ रसाभास अनुचित भाव ते भावाभास।

रसाभास यथा।

'प्रभु लछमन पहि फेर पठाई'। तो इहाँ एक सुपनखा कालकिय राम लछमन सो रति याते रसाभास।

भावाभास यथा।

गुरु सन कहा करिय प्रभु सोई।
रामहि भरतहि भेंट न होई॥

इहाँ अनुचित चिन्ता।

भावोदय।

कैकेई मन जो कछु रहेऊ।
सो विध आनु दुसह दुख दयऊ॥

इहाँ ईर्षाभाव को उदय।

भावसंधि।

बन्धुसनेह सरस इहि ओरा।
उत साहिब से बावर जोरा॥

इहाँ मोह त्रास दो भाव की सन्धि है।

भावसबलता।

चकित चितै मुँदरी पहिचानी।
हरष विषाद हृदय अकुलानी॥

इहाँ मोह हर्ष विषाद उद्वेग की सबलता।

भावसांति।

विसरे हरष सोक सुख दुख गन।

इहाँ भरत के हृदय में जो भाव रहे सो सान्ति
इहाँ यद्यपि रस है तदपि भावमुख्य जानिये।

दोहा

रस साहिब सब ठाँ तऊ काहूँ भाव सरसात ।
ज्यों सेवक के व्याह में राजा चलै बरात ॥

यथा ।

'हरषि चले मुनिवर के साथा' । सदा राम संग चराचर रहत तथापि मुनिसंग कहे ।

इति असंलक्ष्यक्रम व्यंग ध्वनि ।

अथ संलक्ष्यक्रम व्यंगध्वनि ।

"शब्द अर्थ दून दुहुन तें झाँई सी परतीत" सो तीन रीत की, शब्द शक्ति १ अर्थ शक्ति २ उभय शक्ति ३ शब्दशक्ति जहाँ आन पर जाय शब्द एते न निकसै ।

शब्दशक्ति यथा ।

पूछा गुनिन रेख तिन खाँची ।
भरत भुआल होंहि यह साँची ॥

इहाँ गुनिन रेख खाँची भुआल तें सिद्ध होत आन ते नाहीं जो नृप कहो राजा कहो तो गुनी असत होय याते भरत पृथ्वी मे रहिहैं ।

अथ अर्थशक्ति।

जहाँ पर जाय शक्ति दिए ते व्यंग अर्थ रहै सो अर्थ शक्ति तामे प्रथम तीन भेद, स्वतः संभवी कवि प्रौढ़ोक्ति कवि निबद्धवक्ता की उक्ति।

वार्त्ता।

जगतप्रसिद्ध अर्थ ते स्वतः संभवी औ कवि करी प्रौढ़ सो कवि प्रौढ़ोक्ति जैसे जस स्वेत कालंक स्याम।

दोहा।

कहूँ कहावैं जड़न सों बातैं विविध प्रकार।
उपमा में उपमेय को देहिं सकल अधिकार॥

इत्यादि, औ कविन की निषिद्धता कों वक्ता की उक्ति ते बरनै सो कविनिषिद्ध वक्ता की उक्ति।

वस्तु लक्षण।

जहँ विशेषगन वाक्य को अर्थ चमत्कृत होय।
अलंकार ते भिन्न जो वस्तु कहावै सोय॥

अथ स्वतःसंभवीवस्तु ते वस्तु यथा।

पलँग पीठ तजि गोदहिं डोरा।
सिय न दीन पग अवनि कठोरा॥

इहाँ जानकी की सुकुमारता वस्तु ते, वन जिन साथ लेहु यह दूसरी।

स्वतःसंभवोवस्तु ते अलंकार।

पाहन कृमि जिमि कठिन सुभाऊ।
तिनहि कलेश न कानन काऊ॥

इहाँ जानकी की सुकुमारता वस्तु तें, उपमा अलंकार।

अथ स्वतः संभवोअलंकार तें अलंकार यथा।

कल्पबेलि जिमि बहु विधि लाली।
सोच सनेह सुधा प्रतिपाली॥

इहाँ उपमा अलंकार तें रूप अलंकार।

अथ स्वतः संभवो अलंकार ते वस्तु यथा।

चन्द्रकिरनरसरसिक चकोरी।
रविसन्मुख रूप सकहि न जोरी॥

इहाँ दृष्टान्त अलंकार ते सुकुमारता वस्तु।

अथ कविप्रौढ़ोक्ति वस्तु ते वस्तु।

तव रिपुनारिरुदनजलधारा।
भरो बहोरि भयो सो खारा॥

इहाँ रामप्रताप वस्तु ते बैरिन को त्रास दूसरी वस्तु।

कविप्रौढ़ोक्ति वस्तु ते अलंकार।

दण्ड जतिनकर भेद जहँ नृत्तक नृत्य समाज।
जीतो मनसिज सुनिय अस रामचन्द्र के राज॥

इहाँ रामराज वस्तु तें परिसंख्या अलंकार।

कवि प्रौढ़ोक्ति अलंकार ते अलंकार दोहा।

आश्रम सागर सान्तरस पूरन पावन पाथ।
सेन मनो करुनासरित लिये जात रघुनाथ॥

इहाँ रूपक ते उत्प्रेक्षा अलंकार।

कविप्रौढ़ोक्ति अलंकार ते वस्तु।

नाम पाहरू दिवस निस ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद यन्त्रिका प्रान जाहिँ केहि बाट

इहाँ रूपक अलकार ते जानकी विरहवस्तु। अरु कवि निबद्ध बक्ता की उक्ति कवित्त जो बाँधी सो बक्ता कहैं इतनो भेद याते न्यारे उदाहरन नाहीं किये अरु शब्द अर्थ ते होय सो उभय धुनि

यथा।

'लखन लखा प्रभु हृदय खभारू' इहाँ लक्ष-

मन सौमित्र कहो तौ न होय याते हृदय की जाननहार ते शब्द शक्ति अरु समय धर्म सें राम जानि के भाई भी शत्रु भयो ता हेतु आपनी सेवकता जाहिर करत सो समय सम औसर सम कहो तो भी होय याते उभय सक्ति अरु धूनि के भेद १०४०५५ अरु मध्यम काव्य के भेद ८ अपरांग १ असुन्दर २ सन्दिग्ध ३ तुल्यप्रधान ४ वाच्यसिद्धांग ५ अस्फुट ६ काकचिप्त ७ अगूढ़ ८ अपरांगता सें चार भेद, रसवत प्रेयो ऊर्जस स-साहित।

रसवत लच्छन।

जहाँ रस अंग होय मुख्य आन होय सो रसवत

यथा।

अति सुकुमार युगुल मम बारे।
निसिचर सुभट महाबल भारे॥

इहाँ वात्सल्य को अंग भयानक।

नागपास बस भये खरारी।
अविगत अलख एक अविकारी॥

इहाँ अद्भुत को असंगसान्त ।

सियहि बिलोकित क्यों धनु कैसे ।

चितव गरुड़ लघु व्यालहि जैसे ॥

इहाँ शृङ्गार का अंग वीर ।

अथ प्रेयो लछन ।

जहाँ भाव अंग आन कोउ अंग तहाँ प्रेयो ।

यथा ।

सोह नवल तन सुन्दर सारी ।

जगतजननि अतुलित छवि भारी ॥

इहाँ शृङ्गार का अंग देव रति भाव ध्वनि ।

अथ ऊर्जस लछन ।

जहाँ अभाव अंग होय आन कोउ अंगी तहाँ ऊर्जस ।

यथा ।

प्रभु विलोकि सर सकहिँ न डारी ।

थकित भये रजनीचर भारी ॥

इहाँ शत्रु में मोह अनुचित याते वीर का अंग भावाभास ।

देखि रूप मुनि बिरति बिसारी।
बड़ी बार लगि रहे निहारी॥

इहाँ मुनि में रति अनुचित सो हास्य को अंग याते रसाभास।

अथ समाहित।

जहाँ सान्तादिक अंग होय आन अंगी होय तहाँ समाहित।

यथा।

पुनि संभारि उठी सो लंका।
जोरि पानि करि बिनय ससंका॥

इहाँ क्रोध की सान्ति बीर को अंग।

इति अपरांग।

अथ असुंदर लक्षण।

वाच्य ते व्यङ्ग सुन्दर न होय सो असुन्दर।

यथा।

नाथ उमा मम प्रानप्रिय गृहकिङ्करी करेहु।
क्षमहु सकल अपराध अब ह्वै प्रसन्न बर देहु॥

इहाँ सती को अपराध ऐसा नाहीं कियो यह व्यङ्ग सो वाच्य ते सुन्दर नाहीं।

अथ सन्दिग्ध।

जहाँ व्यंग को निश्चय नाहीं तहाँ सन्दिग्ध।

यथा।

मरम वचन जब सीता बोली।
हरिप्रेरित लछमनमति डोली॥

इहाँ मरम वचन में बहुत अर्थ न जाने कहा कहे, तुम भरत में मिलि गये के छत्री कहाय धनु वान धारन करि रन ते डरत हो याको निश्चय नाहीं याते सन्दिग्ध।

अथ तुल्यप्रधान।

जहाँ वाच्यव्यंग बराबर होय सो तुल्यप्रधान।

यथा।

'इक कहहिं इक कहि करहिं अरु इक करहिं कहत न बागहीं।' इहाँ हम कहत नाहीं करि दिखाइहैं सो वाच्य की बराबर व्यंग है याते तुल्यप्रधान।

वाच्यसिद्धांग लक्षण।

जहाँ शब्द सिद्ध अनेक अर्थवारो होय अर्थ को कहै सो वाच्य सिद्धांग।

यथा।

बेगि बिलम्ब न करिय नृप साजी सबै समाज।
सुदिन सुमंगल तबहिँ जब राम होहिँ युवराज॥

इहाँ जब राम युवराज होहिँ तब सुमंगल, अरु जब ह्वैहैं तब सुदिन बूझब अबै राम बन गवन करिहैं।

अथ अस्फुट लक्षण।

जो बहुत कलेश ते व्यङ्ग होय सो अस्फुट।

यथा।

गौतमतियगतिसुरतिकरि नहिँ परसत पदपान।
मन बिहँसे रघुबंशमणि प्रीति अलौकिक जान॥

इहाँ रामचरन पर पती सुरति करि अरु प्रीत ने यद्यपि बहुत पोषण कीनो तथापि बहुत क्लेश ते पाई।

काकुस्वरभेद यथा।

हैं दससीस मनुज रघुनायक।
जाके हनूमान सो पायक॥

इहाँ राम का मनुज हैं ?।

अगूढ़।

जो तुम होते मुनि की नाईं।
तौ पदरज सिर धरत गुसाईं॥

इहाँ तुम वीर वेष बनाय आये सो प्रगटही है।

इति मध्यमकाव्य।

अथ गुन।

चित्त में आनन्द करै रस को भिन्न सो तीन भाँति। माधुर्ज, ओज, प्रसाद।

माधुर्ज लक्षण।

जाके सुनत चित्त द्रवै सो माधुर्य।

यथा।

कङ्कनकिङ्किनिनूपुरधुनि सुनि।

अथ ओज लक्षण।

उद्धत वर्न टवर्ग ते होय सो ओज।

यथा ।

कटकटहिँ जंबुक भूत प्रेत पिसाच खप्पर संचहीं ।

अथ प्रसाद ।

जहाँ शीघ्र अर्थ जानो जाय सरुचि वरन परे सो प्रसाद ।

यथा ।

ज्ञानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार ।
केहिकि लोभ बिडम्बना कीन न यह संसार ॥

अथ अलंकार लक्षण । काव्यकलाधरे बरवा ।

रस अरु व्यङ्ग दुहुन ते न्यारो होय ।
अर्थ चमत्कृत शब्दहि भूषन सोय ॥

उपमालक्षण चमत्कार चन्द्रिका ।

उपमानरु उपमेय जहँ बाचक धर्म सुचार ।
पूरन उपमा हीन ते लुप्तोपमा बिचार ॥

पूरनउपमा तथा ।

तरुन अरुन अंबुज इव चरना ।

अरुनधर्म्म अंबुज उपमान, इव बाचक, चरन उपमेय ।

वाचकलुप्ता यथा।

'बदन मयङ्क तापत्रयमोचन'। बदन उपमेय मयंक उपमान, तापमोचन धर्म।

अथ धर्मलुप्ता यथा।

'प्रभु भुज करिकर सम दसकन्धर'। भुज उपमेय, करिकर उपमान, सम वाचक।

अथ उपमानलुप्ता यथा।

'नखद्युति हृदय भक्ति तम हरना'। नख उपमेय, द्युति धरम इत्यादि।

अथ अनन्या।

उपमानो उपमेय कर कहत अनन्या ताहि।

यथा।

इन सम ए उपमा उर आनी।

अथ उपमानोपमेय लक्षण।

उपमा लागै परस्पर सो उपमा उपमेय।

यथा।

वे तुमसे तुम उनसम स्वामी।

अथ प्रतीप कंठाभरणे।

उपमान जहाँ उपमेय हो जाय तहाँ पहिलोई प्रतीप भनै।

यथा ।

उतरि नहाने जमुनजल जो सरीर सम स्याम ।

तृतीय प्रतीप ।

उपमान जहँा उपमेयता लहि फिर ताहि निरादर दूजी भने ।

यथा ।

जिनके बल कर गर्भ तोहि ऐसे मनुज अनेक ।

अरु कोई कहै मनुष्य भर के राम उपमान है तो जब ईश्वर भए तब इन्द्रादिक सबके उपमान भए ।

बरवा यथा ।

का घूघट मुख मूदहु अबला नारि ।
चन्द सरग पर सोहत इहि अनुहारि ॥

तृतीय प्रतीप ।

वर्न वस्तु वर्न हो अबर्न को अनादरै सो तीसरो प्रतीप कवि दूलह गनायो है ।

यथा ।

कुलिशहु चाहि कठोरता कोमल कुसुमहु चाहि
चित खगेस रघुनाथ कर बूझ परै कहु काहि ॥

चतुर्थप्रतीप ।

ललितललाम लक्छन जहाँ वरन सो और की उपमा वरनन होय ताहु कहत प्रतीप है ।

यथा ।

सीयवदन सम हिमकर नाहीं ।

पंचमप्रतीप यथा ।

कोटि कास उपमा लघु सोऊ ।

अथ रूपक ।

वरनत विषई विषै को करि अभिन्न तद्रूप ।
अधिक हीन सम उक्ति सो रूपक त्रिविध अनूप

अधिक तद्रूप यथा ।

हरिहरकथा विराजत वेनी ।
सुनत सकलमुदमंगल देनी ॥

न्यून यथा वरवा ।

द्वौ भुज कर हरि रघुवर सुन्दर भेस ।
एक जीभ कर लक्ष्मन दूसर रसेस ॥

सम यथा ।

केहरिसावक जनम न वन के ।

अधिक अभेद ।

गुरुपदरज मृदु मंजुल अंजन ।

न्यून ।

असि खल जे विषई बक कागा ।

समयथा ।

संपति चकई भरत चक मुनि आयसु खेलवार।
तेहि निस आश्रम पींजरा राखे भा भिनुसार॥

अथ परिनाम ।

विषई विषे हो फुरै जानो परिनाम ।

कर कमलन धनुसायक फेरत ।
जिय की जरन हरत हँसि हेरत ॥

उल्लेष लच्छण ।

ललित ललाम कै बहुते कै एक जहँ एक हिए उल्लेष ।

प्रथम यथा ।

'देखहि भूप महारनधीरा ।' ते दूहिं विधि इहां जाहि जस भाउ दूहाँ लौं ।

द्वितीय यथा ।

राम कांम सत कोटि ते सर्सि सत कोटि लौं ,अथ सुमिरन भ्रमसंदेह के नामही लच्छन है

सुमिरन यथा।

वीच वास करि जमुनहि आये।

निरखि नीर लोचनजल छाये॥

कपि करि हृदय विचार, दीन्ह मुद्रिका डार तब

जान अशोक अँगार, दीन हर्ष उठि कर लियो॥

भ्रम संदेह।

राम लखन सखि होहि कि नाहीं।

शुद्धापन्हुति लक्षण।

और के आरोप ते साँच छपावत धर्म सुद्धापन्हुति कहत हैं।

यथा।

बन्धु न होय मोर यह काला।

हेत्वपन्हुति लक्षण।

जुगति सो यहै हेत्वपन्हुति।

यथा।

"तव प्रताप बड़वानल" ते "भरो बहोरि भयो तेहि खारा" लौं।

बरवा।

कुहू न निसि अँधियरिया दिन नहिँ घाम।

जगत जरत अस लागत मोहि बिनु राम॥

परयस्ताजपन्हुति लच्छन।

परयस्तापन्हुति बखानै आन में जो आन।

यथा।

मीन में नहिँ प्रीति सजनी पंक में नहिँ प्रेम ॥
एक मति गति एक ब्रत यह भरतही में नेम ॥

अथ भ्रांतापन्हुति।

आन के भय ते भ्रम भ्रम को निवारै तहाँ
भ्रान्तापन्हुति बखानै कवि आदरे।

यथा।

होहि न तड़ित न बारिद माला। ते मन्दो-
दरी श्रवन ताटंका। सो प्रभु जनु दामिनी लों।

अथ छेकापन्हुति।

जुक्ति करै जहँ पर सों बात दुराय।

यथा।

कछु न परीच्छा लीन गुसाईं।
कीन्ह प्रनाम तुम्हारे नाईं ॥

अथ कैतवापन्हुतिलच्छन।

कैतवापन्हुति में मिस कहै आन। पठै मोहि
मिस खगपति तोही। रघुपति दीन बड़ाई मोही

अथ उत्प्रेक्षा लक्षन ।

उत्प्रेक्षा सम्भावना वस्तु हेतु फल लेखि ।
वस्तु द्विविध उक्तास्पपद अनुक्तास्पपद पेखि ॥
हेतु सुफल सिद्धास्पपद असिद्धास्पपद मान ।
वाचक जहँा न कहत हैं गम्योत्प्रेक्षा जान ॥

जाकी सम्भावना कीजै सो सम्भाव्यमान उपमान, अरु जा विषै सम्भावना कीजै सो आस्पपद उपमेय, संभाव वाको विषय संभाव्य मान धरम संभावना को ठौर दोइ रहै सो उक्तास्पपद वस्तूत्प्रेक्षा

यथा ।

करत बतकही अनुज सन मन सिय रूप लुभान
मुख सरोज मकरन्द छवि करत मधुप इव पान

मुख उपमेय, सरोज उपमान, छवि विषय मकरन्द, विषय दोइ पाये याते उक्ति विषया,

अनुक्ति विषया वस्तूत्प्रेक्षा ।

जहँा संभाव्यमान रहै संभावना को विषय नाहीं रहै अरु क्रिया के पाछे वाचक आवै सो अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ।

यथा ।

'मयहु मनहु मारुत अनुकूला ।' ते इहाँ होनो क्रिया ताके आगे वाचक है, अरु जहाँ अहेतु को हेतु माने सो हेतूत्प्रेक्षा, सो सिद्ध विषय में होय तो सिद्धविषया, अरु असिद्ध विषय में होय तो असिद्धविषया ।

सिद्धविषया हेतूत्प्रेक्षा यथा ।

मनहु प्रेम बस विनती करहीं ।
हमहि सीय-पद जिन परिहरहीं ॥

ते इहाँ विनय हेतु नाहीं ताको हेतु मानो अरु विषय सिद्ध है ।

अथ असिद्धविषया हेतूत्प्रेक्षा यथा ।

'इनहिं बिलोकत अति अनुरागा' । ते तेहि इरषा वह आन दुराये लों, ते यह अहेतु है ताको हेतु मानो अरु विषय असिद्ध है अरु अफल को फल माने सो फलउत्प्रेक्षा ।

सिद्ध विषयाफलोत्प्रेक्षा यथा ।

अति कटुवचन कहत कैकेई ।
मानहु नोन जरे पर देई ॥

प्रसिद्धविषयाफलोत्प्रेक्षा यथा।

जनु सब साँचे होन हित भये सगुन इक बार।
साँचे होबे की इच्छा फल।

अथ रूपकातिशयोक्ति अलंकार लक्षन।

रूपकअतिशयउक्ति जहँ केवलही उपमान।

यथा।

अरुन पराग जलज भरि नीके।
ससिहि भूष अहि लोभ अमी के॥

तो इहाँ कर नाहीं कमल माच पायो याही रीति ते मुख नाहीं ससि पायो।

अथ भेदकातिशयोक्ति लक्षन।

औरै पद ते होत है भेदकातिसय उक्ति।

यथा।

औरैहसनिविलोकनिचितवनि औरै वचनउदार
तुलसी ग्रामवधू कित देख न रहे सँभार॥

अथ सम्बन्धातिशयोक्ति।

सम्बन्धातिशयोक्ति जहँ देत अजोगहिँ जोग।

यथा।

जो सम्पदा नीचगृह सोहा।
सो विलोकि सुरनायक मोहा॥

अजोग जोग कीनो द्वितीय जोग में अजोग भेद दूसरो गनायो है।

यथा।

जन्म सिंधु पुनि बंधु विष दिनमलीन सकलंक।
सियमुख पटतर पाव किमि चन्द बापुरो रंक॥

चन्द जोग ते अजोग कीनो।

अथ अक्रमातिशयोक्ति यथा।

गहि करतल मुनि पुलक सहित कौतुक सु उठाय दियो। आकर्ष्यौ सियमन समेत हरि हर खोजन कहियो॥ इहाँ धनु आकर्षन कारन सिय मन कारज सो साथ भयो।

अथ चपलातिशयोक्ति लच्छन।

है चपलातिशयोक्ति जब कारन सुनते काज।

यथा।

तब शिव तीसर नयन उघारा।
चितवत काम भयो जरि छारा॥

इहाँ सुनने देखने बराबर है चितवन कारन कामजरन कारज।

अथ अत्यंतातिशयोक्ति लक्षण ।

पूरब कारज होत है पाछे कारन जान ।
अत्यन्तातिशयोक्ति तहँ कविवर करत बखान ॥

यथा ।

पद पखारि जलपान करि आप सहित परिवार
पितर पार करि प्रभुहिँ पुनि मुदित गयो लै पार

इहाँ राम पार जाइबो कारन, पितर पार करनो कारज, सो कारज प्रथम है अरु याको कोई अभावहेतु भी कहत हैं ।

अथ तुल्ययोगिता लक्षन ।

तुल्ययोगिता तीन विधि लच्छन नाम प्रधान ।

कहूं वर्न वर्न की, कहूँ अवर्न अवर्न की, कहूँ वर्न अवर्न की ।

वर्न वर्न यथा ।

गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं ।
मुदित भए पुनि पुनि पुलकाहीं ॥

इहाँ सब वर्न हैं ।

अवर्न अवर्न जथा ।

कमल कोक मधुकर खग नाना ।
हरषे सकल निसा अवसाना ॥

इहाँ कमल कोकादि अवर्न हैं ।

वर्न अवर्न यथा बरवा ।

नित्य नेम करि अरुन उदै जब कीन ।
निरखि निसाकर नृप मुखभये मलीन ॥

नृप वर्न निसाकर अवर्न की तुल्यजोग्यता है ।

अथ दीपक लच्छन ।

सो दीपक निजगुनन ते वर्न इतर इक साथ ।

यथा ।

कसे कनक मनि पारष पाये ।
पुरुष परखिये समै सुहाये ॥

इहाँ कनक मनि अवर्न, पुरुष वर्न ताको कसन पारष पावनै अरु पुरुष उपमेय सम याते पर सोभा पावत अरु कोई कहै तुल्यजोग्यता दीपक में कहा भेद? ।

दोहा ।

एक एक में धरम ते तुल्यजोग्यता होय ।
वर्न अवर्नहि ते कहे दीपक सब कवि लोय ॥

अथ दीपकावृत्त ।

दीपक आवृत तीन हैं पद आवृत कहुँ अर्थ ।
पद अरु अर्थ दुहून ते भाषत सुकवि समर्थ ॥

पद जथा ।

'सर्व सर्व गति सर्व सुरालय' इहाँ राम उपमेय द्वितीय रूप उपमान ताको एक धर्म याते दीपक औ सर्व सर्व तीन बार आयो याते पद की आवृति ।

अर्थावृति ।

'कूजहि कोकिल गुंजहि भृङ्गा ।' कूजहिँ गुंजहिँ शब्द भिन्न पद एक है याते अर्थावृति ।

तृतीय यथा ।

पुरी विराजत राजत रजनी ।
रानी कहहिँ विलोकहु सजनी ।

अथ प्रतिवस्तूपमा ।

प्रतिवस्तूपम कहत हैं समुझि दुवाक्य समान ।

यथा ।

भलो भलाई लेत है लहैं निचाई नीच ।
सुधा सराही अमरता गरल सराही मीच ॥

इहाँ भले बुरे उपमेय अरु सुधा गरल उपमान ते भलाई उपमेय अमरता उपमान कर एक भये अरु दीपकदीपकावृत्ति प्रतिवस्तूपमा में भेद, दीपक में इक धर्म नाहीं दीपकावृत्त में नेम नाहीं प्रतिवस्तूपमा में दोइ हैं।

अथ दृष्टान्त लच्छन।

जहाँ बिम्ब प्रतिबिम्ब सो दुहू वाक्य दृष्टान्त।

यथा।

बडे सनेह लघुन पर करहीं।
अग्निभूमि गिरि सिर तृन धरहीं॥

इहाँ बड़े लघु गिरि तृन अग्निधूम को बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव है।

अथ निदर्सना।

जहँ उपमेय सुवाक्य में उपमा वाक्य सजोग।
जो सो करत निदर्सना कहत सबै कवि लोग॥

यथा।

सुनु खगेस हरिभक्ति बिहाई।
जो सुख चाहै आन उपाई॥

सो सठ महासिंधु विन तरनी।
पैर पार चाहत जड़ करनी॥

तो इहाँ जो सुख चाहै है हरिभक्ति हीन सो समुद्र पैरो चाहत यह जो सो को सम्बन्ध है।

अथ दूसरो भेद लच्छन।

रखै जहाँ उपमेय में उपमा धर्म सुजान।

यथा।

रघुपतिविरह विषमसर भारी।
तकि तकि बार बार मोहि मारी॥

इहाँ विरह उपमेय विषमसर काम ताको मारन तकि तकि क्रिया धरन कीनी।

तृतीय लच्छन।

जहाँ असत सत करि क्रिया करै आन उपदेश।

यथा।

संग लाय करनी कर लेहीं।
मानहु मोहि सिखावन देहीं॥

अब व्यतिरेक लच्छन।

व्यतिरेकहि उपमान ते उपमे अधिको लेखि।

यथा।

निज परिताप द्रवहिँ नवनीता।
परदुख द्रवहिँ सुसन्त पुनीता॥

इहाँ नवनीत उपमान ते सन्त उपमेय अधिक।

अथ सहोक्ति लच्छन।

सो सहोक्ति इक साथहीं बरनै दुहुन बनाय।

यथा।

बल प्रताप वीरता बड़ाई।
नाक पिनाकहि संग सिधाई॥
इहाँ नाक पिनाक संग।

अथ विनोक्ति।

है विनोक्ति द्वै भाँति की प्रस्तुत कछु बिन छीन।
अरु सोभा अधिकी लहै प्रस्तुत कछु ते हीन॥

प्रथम।

'बादि बसन बिनु भूषन भारू' ते 'बिनु हरि भक्ति जाइ जप जोगा' लों।

द्वितीय।

सन्तहृदय जस गतमदमोहा।

अथ समासोक्ति लच्छन।

समासोक्ति प्रस्तुत फुरै प्रस्तुत बरनन माँझ।

जहाँ अप्रस्तुत फुरै प्रस्तुत बरनन करै तै तहाँ समासोक्ति ।

यथा ।

अरुन उदै अवलोकहु ताता ।
पंकज लोक कोकसुखदाता ॥

इहाँ अरुन उदै पंकज कोक प्रस्तुत अरु आपनो वियोग अप्रस्तुत ताको वृत्तान्त जानो गयो।

अथ परिकर लच्छन ।

है परिकर आश्रय लिये जहाँ विशेषन होय ।

यथा ।

सुभगश्रवन सरसीरुहलोचन ।
बदनमयङ्क तापत्रयमोचन ॥

इहाँ मयंक तापमोचन है ।

अथ परिकरांकुर लच्छन ।

साभिप्राय विशेष जहँ परिकरअंकुर नाम ।

यथा ।

सुनहु विनय मम बिटप असोका ।

इहाँ असोक अभिप्राय सहित है तुम सोक रहित हो तैसही हमार सोक हरो ।

श्लेष ।

श्लेष अलंकृत अर्थ बहु एक शब्द से होय ।

यथा ।

'भरत भुआल होंहि यह साँची' । भुआल राजा अरु भू पृथ्वी तासे घर ।

अथ अप्रस्तुतप्रशंसा ।

अप्रस्तुत के कथन ते है प्रस्तुत को बोध ।
अप्रस्तुत परसंस सो कहत सबै कवि सोध ॥

यथा ।

कुपथ मांगु रुज व्याकुल रोगी ।
वैद न देय सुनहु मुनि योगी ॥

इहाँ वैद रोग अप्रस्तुत ताते तुम्हार विवाह हम न करन दे हैं यह प्रस्तुत ।

अथ परजायउक्ति लक्षण ।

परजायोक्ति प्रकार है कछु रचना सों बात ।
मिसकरि कारज साधिये जो हित चितहिसोहात

प्रथम ।

धरी न काहू धीर, सब कर मन मनसिज हरयो
जेहि राखे रघुबीर तेहि उबरे तेहि काल में ॥

इहाँ रघुवंश विषै वीर ते अति वीरता सूचित भई ।

द्वितीय ।

गइ निसि बहुत सैन अब कीजै ।
मोहि तोहि भेंट भूप दिन तीजे ॥

इहाँ छल ते कारज कीनो ।

व्याजस्तुति ।

व्याजस्तुति निन्दा मिसहिँ जबै बड़ाई होय ।

यथा ।

'अहो मुनीस महाभट मानी' । मुनि की बड़ाई मे निन्दा ।

अथ आक्षेप ।

तीनि भाँति आक्षेप है एक निषेधाभास ।
पहिले कहिये आप कछु बहुरि फेरिये तासु ॥
दुरै निषेध जो विधिवचन लच्छन तीनो लेष ।

प्रथम ।

भरतविनय सादर सुनिय करिय विचार बहोरि ।
करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि

इहाँ भरतबचन सुनिय पुनि आपहू अपनी वाला बात को निषेध को निषेध सरस करै लगे

द्वितीय ।

सानुज पठइय मोहि बन कीजिय सबहिँ सनाथ
न तरु फेरिये बन्धु दोउ नाथ चलौं मैं साथ ॥

इहाँ आप प्रथम कही मोहि अनुज सहित बन मे पठाइये ताको फेरि रोक्यो मैं साथ चलौं।

तृतीय ।

राज देन कहि दीन बन मोहि न सोच लवलेस।
तुम बिनु भूपति भरतही प्रजहि प्रचण्ड कलेस॥

पुनः ।

हृदय सनाव भोर जिनि होई ।
रामहिँ जान कहै जिन कोई ॥
सुनहु राम तुम कहँ मुनि कहहीं ।
राम चराचर नायक अहहीं ॥

अथ विरोधाभास ।

'भासै जबै विरोध सों वहै विरोधाभास ।'
'भये अलेष सोच बस लेखा' इहाँ अलेषा लेष विरोध सो जानो जाय है ।

अथ विभावना लक्षण ।

हेतु बिन कारज की उपज विभावना है ।

यथा।

विनु पद चलै सुनै विनु काना। ते
विनु बानी बक्ता बड़ योगी। लौं

द्वितीय।

हेतु अपूरन ते जबै कारज पूरन होय।

यथा।

काम कुसुम धनुसायक लीन्हे।
सकल भुअन अपने बस कीन्हे॥

तृतीय।

प्रतिबन्धक के होतहीं कारज पूरन मान।

यथा।

जो ज्ञानिन कै चित अपहरई।
बरिआई बिमोह बस करई॥
इहाँ ज्ञान प्रतिबन्धक है।

चतुर्थ।

जबै अकारन वस्तु ते कारज परगट होय।

यथा।

बोरहि आनहि बूड़हि जेही।
भएउ बल बोहित सम तेही॥

इहाँ पाषाण ते काष्ट को कारन उपज्यो ।

पंचम ।

काहू कारन ते जबै कारज होय विरुद्ध ।

यथा ।

जेहि तरु रहत करत सो पीरा ।
उरग स्वांस सम त्रिविधि समीरा ॥

इहाँ सीतल ते तप्तता उपजी ।

षष्ट ।

काहू कारज ते जबै उपजै कारन रूप ।

यथा ।

जगत पिता सै सुत करि जाना ।

अथ विशेषोक्ति लच्छन ।

बिशेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजै नाहिं ।

यथा ।

सकेउ उठाय असुर सुमेरू ।
सो हिय हार गयो करि फेरू ॥

इहाँ कारन रहो अरु धनुभंग कारज नाहीं भयो ।

अथ असंभवलच्छन ।

कहे असम्भव हेतु जहँ बिनु सम्भावन काज ।

यथा ।

अति सुकुमार जुगुल मम बारे ।
निसिचर सुभट महाबल भारे ॥

अथ संगति ।

तीन असंगति काज अरु कारन न्यारे ठाम ।
और ठौरहीं कीजिये और ठौर को काम ॥
और काज आरम्भिये और कीजिये दौर ।

प्रथम यथा।

जिन बीथिन बिहरे सब भाई।
थकित होंहिँ पुर लोग लुगाई ॥

इहाँ राम बिहरे कारन, थकित लोग लुगाई कारज ।

द्वितीय ।

ते पितु मातु सखी कहु कैसे ।
जिन पठये सखि बालक ऐसे ॥

इहाँ मातु पिता बन दियो ।

तृतीय ।

राज देन कह सुभ दिन साधा ।
कह्यो जान बन केहि अपराधा ॥

इहाँ राज आरम्भ करि बन दियो ।

अथ विषम लक्षन ।

विषम अलंकृत तीन विधि अनमिलिते को संग
कारन को रँग और कछु कारज औरे रंग ॥
और भलो उद्यम किये होइ बुरो फल आय ।

प्रथम यथा ।

सारग अगम भूमिधर भारी ।
तेहि महँ नाथ नारि सुकुमारी ॥
इहाँ राह अगम तुम सुकुमार ।

द्वितीय ।

'उपजे यदपि पुलस्तकुलपावन' अमल अनूप 'तदपि महीसुर श्रापबस भए सकल अघ रूप' पुलस्तकुल अमल कारन; रावनादि अघ स्याम रूप ।

तृतीय ।

'सानी सरलरस मातुबानी सुनि भरत व्याकुल भए' ।

सम लच्छन ।

अलंकार सम तीनि विधि यथायोग को संग ।
कारज में सब पाइये कारनही को रंग ॥

श्रम बिनु कारज सिद्धि जो उद्यम करते होय।

प्रथम।

जस दूलह तस बनी बराता।
कौतुक बिबिधि होइ मग जाता।

द्वितीय।

कास न कहहु अस रघुकुलकेतू।
तुम पालक सन्तत श्रुतिसेतू॥

तृतीय।

सेतुबन्ध भइ भीर अति कपि नभपन्थ उड़ाहिं॥
अपर जलचरन्ह उपर चढ़ि बिनुश्रम पारहि जाहिं॥

अथ विचित्र।

इच्छित फल बिपरीत को कीजे जतन विचित्र।

यथा।

जो नहिँ होत मोहि अति मोही।
मिलतेउँ नाथ कवन बिधि तोही॥

अधिक लच्छन।

अधिक दीर्घ आधार ते जब आधेय जु होय।
जो आधार अधेय ते अधिक अधिक ए होय॥

प्रथम यथा।

बहुत उछाह भवन अति थोरा।
मानहु उमगि चल्यो चहुँ ओरा॥

भवन अधार उछाह आधेय सो उमगि चल्यो।

द्वितीय।

सकल भुवन भरि रहा उछाह्न।
जनकसुता रघुबीर बिवाह्न॥

इहाँ भुवन आधेय अधिक।

अथ अल्प।

अल्प अल्प आधेय ते सूक्ष्म होय अधार।

यथा बरवा।

अब जीवन की है कपि आस न मोहिँ।
कनगुरिआ की मुँदरी ककना होहिँ॥

अथ अन्योन्या लच्छन।

अन्योन्या दोउ जहां आपुस में उपकार।
मुनि रघुबीर परस्पर नवहीं॥

अथ विशेष।

तीन प्रकार बिसेष है अनाधार आधेय।
बड़ी बात की सिद्धि को कछु अरम्भ जो देय॥

वस्तु एक को कीजिये बरनंन ठौर अनेक।

प्रथम।

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रिया एक मन मोरा॥
इहाँ प्रेम अनादर है।

द्वितीय।

कपि तव दरस सकल दुख बीते।
मिले आज मोहिं राम सप्रीते॥
इहाँ कपिदरस ते रामदरस पाये।

तृतीय यथा।

निज प्रभुमय देखौं जगत कासो करौं बिरोध।
इहाँ एक राम अनेक ठौर।

अथ व्याघात।

व्याघात जु कछु और तें कीजे कारज और।
बहुरि बिरोधी ते जहाँ ल्यावै कारज ठौर॥

प्रथम यथा।

नामप्रभाव जान सिव नीके।
काल कूट फल दीन अमी के॥

द्वितीय ।

ऐसे बचन कठोर सुनि जो न हृदय बिलगान ।
तो पुनि विषम बियोग दुख सहिहैं पामर प्रान॥

इहाँ जीवन बताय मरन दृढ़ कीन्हो ।

अथ कारनमाला ।

कारन काज परंपरा कारनमाला देखि ।

यथा ।

धर्म ते बिरति जोग ते ज्ञाना ।
ज्ञानमोक्षप्रद वेद बखाना ॥

इहाँ जोग कारन, ज्ञान कारज, ज्ञान कारन मोक्ष कारज ।

अथ एकावली

गहत मुक्त की रीति तें एकावलि पहिचानि ।

यथा ।

विषय करन सुर जीव समेता ।
सकल एक ते एक सचेता ॥

अथ मालादीपक ।

दीपक एकावलि मिले माला दीपक होत ।

यथा ।

जग जप राम राम जप जेही ।

अथ सार लक्षण ।

एक एक ते अधिक बखानो ।
सार अलंकृत सोई मानो ॥

यथा ।

तिन महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी ।
तिन महँ निगम नीति अनुसारी ॥

यथासंख्य ।

यथासंख्य वरनन विषै वस्तु अनुक्रम संग ।

यथा ।

बन्दौं राम नाम रघुबर को ।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥

अथ परजाय ।

है परजाय अनेक को क्रम सो आश्रय एक ।
फिरि क्रम सो जब एक वह आश्रय धरै अनेक ॥

प्रथम यथा ।

दिखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखण्ड ।
रोम रोम प्रति राजहीं कोटि कोटि ब्रह्मण्ड ॥

द्वितीय ।

सती विधात्री इन्दिरा देखी अमित अनूप ।
जेहिजेहिभेषअजादिसुर तेहितेहि सति अनुरूप

अथ परिसंख्या लक्षण ।

परिसंख्या इक थल बरजि दूजे थल ठहराय ।

यथा ।

दण्ड जतिन कर भेद जहँ नृत्यक नृत्य समाज॥
जीतो मनसिज सुनिय अस रामचन्द्र के राज॥

विकल्प ।

है विकल्प यह कै वहै इहि विधि को वृत्तान्त।

यथा ।

कै तन प्रान कि केवल प्राना ।
बिधि करतब कछु जात न जाना ॥

तिलक ।

उपमानोपमेय में सन्देह अरु भूत वर्तमान में उपमान उपमेय रहित, भविष्य में विकल्प यह भेद ।

अथ समुच्चय ।

होय समुच्चय भाव बहु कहुँ इक उपजै संग ।
एक काज चाहो करन ह्वै अनेक इक अंग ॥

प्रथम ।

"सकुच सीय" ते "सुमिरि पिता पन मन अति छोभा" लौं ।

द्वितीय ।

देखि राम पदकमल तिहारे ।
अब पूजे सब काज हमारे ॥

इहाँ एक रामपद कमल ते अनेक काज भए ।

अथ कारकदीपक लक्षण ।

कारक दीपक एक मे क्रम सों भाव अनेक ।

यथा ।

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ।

अथ समाध लक्षण ।

सो समाध कारज सुगम और हेतु मिलि होत।

यथा ।

सकल अमानुष कारम तुम्हारे ।
केवल कुलगुरुकृपा सुधारे ॥

इहाँ कुलगुरुकृपा पाय कारज भयो ।

अथ प्रत्यनीक लक्षण ।

प्रत्यनीक जो शत्रु की पक्ष देखि कर कोप ।

यथा ।

रे खल का मारसि कपि भालू ।
मोहिं बिलोक तोर मैं कालू ॥

इहाँ राम पक्ष बानर पै कोप रावन कीन्हो ।

अथ काव्यार्थापत्ति लक्षण ।

काव्यर्थापत्ति यह किया तेहि को यह कह जान ।

यथा ।

पिय तेहि तेँ जीतब संग्रामा ।
जासु दूत कर ऐसन कामा ॥

इहाँ जाके दूत लंका जारी ताको तुम कहा ।

अथ काव्यलिंग ।

काव्य लिंग जहँ युक्ति सों अर्थ समर्थन होय ।

यथा ।

सो नर कस दशकंध बालि बध्यो जेहिँ एक सर ।
बीसहु लोचन अंध धिक तव जन्म कुजाति जड़॥

अथ अर्थान्तरन्यास लक्षण ।

जो विशेष सामान्य दृढ़ तौ अर्थान्तरन्यास ।

यथा ।

राम एक तापस तिय तारी ।

रामप्रसाद सोच नहिँ सपने। इहाँ लों।

विकस्वर लक्षण।

विकस्वर होय विशेष जहँ फिरि सामान्य विशेष।

यथा।

रघुबीर निज सुख जासु गुनगन कहत अग जगनाथ सो। काहे न होहु बिनीत परम पुनीत सद्गुन सिन्धु सो॥

अथ प्रौढ़ोक्ति लक्षण।

प्रौढोकति उतकर्ष कों हेतु धरै जु अहेतु।

यथा।

काम कलभ कर भुजबल सींवाँ।

अथ सम्भावना लक्षण।

ज्यौं यों त्यों यों होय तौ सम्भावना बिचार।

यथा।

जो तुम होते मुनि की नाँईं।
जो पदरज सिर धरत गोसाँईं॥

अथ मिथ्याध्यवसित लक्षण।

मिथ्याध्यवसित झूठही कहै जु झूठी रीत ते।

यथा ।

कमठ पीठ जामहिँ बरु बारा ।
बंध्यासुत बरु काहु मारा ॥

अथ ललित लक्षण ।

ललित कह्यो कछु चाहिये ताही को प्रतिबिंब ।

यथा ।

सुनिय सुधा देखिय गरल सब करतूत कराल ।
जहँतहँ काक उलूक पिक मानस सकृत मराल॥

इहाँ रामराज अभिषेक सुनन मात्र देखिवे सों बन आयो सो न कहे सुधा गरल काक उलूक मराल कहे प्रतिबिम्ब ।

प्रहर्षन लक्षण ।

तीन प्रहर्षन जतन बिनु बाँछित फल जहँ जान
बाँछितहु ते अधिकता दूजो करत बखान ॥
सोधत जाके जतन को बस्तु चढ़ै कर सोय ।

प्रथम यथा ।

सोचत पंथ रह्यों दिन राती ।
अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥

इहाँ बांछित रह्यो ।

द्वितीय यथा।

सुनत वचन बिसरे सब दूखा।
तृषावन्त जिमि पाय पियूखा॥

तृतीय यथा।

इहि विधि मन विचार कर राजा।
आप गये कपि सहित समाजा॥

अथ विषाद।

सो विषाद चितचाह ते उलटै जो कछु होय।

यथा।

"तात जाउँ बलि बेग नहाहू" ते "सर सम लगे" लौं। अरु जो आन उपमादिक सब विषाद कौं पोसन करेहैं॥

अथ उल्लास।

गुन औगुन जब और को और धरै उल्लास।

गुन ते गुन यथा।

जो हरषहिँ पर सम्पति देखी।

दोष ते दोष यथा।

दुखित होंहि पर विपत्ति बिसेषी।

गुन ते दोष यथा।

जरहिँ सदा पर सम्पत्ति देखी।

अथ लेस लच्छण ।

गुन में दोष रु दोष में गुन कल्पना सो लेस ।

यथा ।

जो नहि होत मोह अति मोहीं ।
मिलतेउँ तात कवन बिधि तोहीं ।

गुन में दोष यथा ।

मोहि दीन सुख सुजसु सुराजू ।
कीन्ह कैकई सब कर काजू ॥

अथ मुद्रा लच्छण ।

मुद्रा प्रस्तुत पद बिषै औरै अर्थ प्रकास ।

यथा ।

सहसनाम मुनि भनित सुनि तुलसी बल्लभ नाम ।
सकुचितहियहँसिनिरषिसियधरसधुरन्धरराम ॥
इहां तुलसीदास के बल्लभ, अरु वृन्दा के बल्लभ ।

अथ रत्नावली लच्छण ।

रत्नावलि प्रस्तुत अरथ क्रम ते औरै नाम ।

यथा ।

सदा नगन पद प्रीति जेहि जानो नगन समान ।
जगन ताहि जययुत रहत तुलसी संसय हान ॥
नगन भरत जगन अराम निवासो ।

अथ तद्गुन लक्षण।

तद्गुन तजि गुन आपनो सङ्गति को गुन लेखि।

यथा।

धूमहु तजै सहज करुआई।
अगरप्रसङ्ग सुगन्ध बसाई॥

अथ पूर्वरूप लक्षण।

पूर्वरूप लै संग गुन तजि फिरि अपनो लेय।
दूजो जो गुन ना मिटै किये मिटन को भेय॥

प्रथम यथा।

करि सुवेष जगवञ्चक जोऊ।
वेषप्रताप पूजियत सोऊ॥
उघरहिँ अन्त न होहिँ निबाहू।
कालनेमि जिमि रावन राहू॥

द्वितीय यथा।

कामचरित नारद सब भाषे।
जद्यपि बरजि प्रथम शिव राखे॥

अथ अतद्गुन लक्षण।

लागत सङ्गत गुन नहीं कहैं अतद्गुन ताहि।

यथा ।

खलहु करहि भल पाइ सुसंगू ।
मिटहि न मलिन सुभाव अभंगू ॥

अथ अनगुन लक्षण ।

अनगुन सङ्गति तें जबै पूरब गुन सरसाय ।

यथा ।

सज्जनफल देखिय ततकाला ।
काक होंहि पिक बकहु मराला ॥

मीलित लक्षण ।

मीलित जो सादृश्य ते भेद जबै न लखाय ।

यथा ।

तब सुर जिते एक दसकन्धर ।
अब बहु भये तकहु गिरिकन्दर ॥

अथ सामान्या लक्षण ।

सामान्य जु सादृश्य ते जानि परै न विशेष ।

यथा ।

राम लखन सखि होंहि कि नाहीं ।

अथ उन्मीलित लक्षण ।

उन्मीलित सादृश्य ते भेद फुरै तब मान ।

यथा वर्णन।

चम्पक हरवा अङ्ग मिलि अधिक सुहाय ।
जानि परै सिय हियरे जब कुँभिलाय ॥

अथ विशेष लक्षण ।

यहै विशेष विशेष पुनि फुरै जु समता माँझ ।

यथा ।

वेषन सो सखि तिय नहि संगा ।
आगे अनी चलत चतुरंगा ॥

अथ गूढ़ोत्तर।

गूढ़ोत्तर कछु भाव ते उत्तर दीनो होय ।

यथा ।

जिन जल्पना करु सुजस नास ते ।
"इक करत कहत" न, "बागहीं" लों ॥

अथ प्रश्नोत्तर लक्षण ।

चित्र प्रश्न उत्तर दुओ एक शब्द में होय ।

यथा ।

मृत्यु निकट आई खल तोहीं,तेते उलटा होंहि लों।

अथ सूक्ष्म लक्षण ।

सूक्षम पर-आसै लखै करै क्रिया कछु भाय ।

यथा

वेद नाम कहि अँगुरिन खण्ड अकास।
सूपनखा प्रभु पठई लछिमन पास ॥

अथ पिहित लच्चण।

पिहित छिपी पर बात को जान जनावै भाय।

यथा।

"सती कपट जाना सुर स्वामी" तें।
"बिपिन अकेलि" लौं।

अथ व्याजोक्ति।

व्याज उक्ति कछु और बिधि कहै दुरै आकार।

यथा।

नाम प्रताप भानुअवनीसा।
तासु सचिव मैं सुनहु महीसा॥

अथ गूढ़ोक्ति लच्चण।

गूढ़ोकति मिस और के कीजे पर उपदेश।

यथा।

"सौ रज धीर जाहि रथ चाका" ते।
"जाके अस रथ होय" लौं।

अथ विव्रोक्ति लक्षण।

श्लेष छप्यो परगट करै विव्रोक्ति है ऐन।

यथा।

वेग विलम्ब न करिय नृप साजिय सबै समाज।
सुदिन सुमङ्गल तबहिँ जब राम होंहि युबराज॥

अथ युक्ति लक्षण।

यहै युक्ति कीन्हें क्रिया कर्म छपायो जाय।

यथा।

गये जामजुग भूपति आये।
घर घर बाज अनंद बधाये॥

तो इहां जो राजा को निसा में निसाचर रानी की सेज पर राख्यो सो कर्म कानन जाय छपायो।

अथ लोकोक्ति लक्षण।

लोकोकति कछु बचन जो लीने लोकप्रबाद।

यथा।

देव कहा हम तुमहि गोसाँई।
ईंधन पात किरातमिताई॥

अथ छेकोक्ति।

लोकोकति कछु भेद सों सो छेकोकति प्रवीन।

यथा।

सत्य सराहि कह्यो बर देना।
मानहुं माँगि कि लेहि चबेना॥

इहां चबेना लोकोक्ति अरु राज न देहौ।

अथ वक्रोक्ति लक्षण।

वक्रउक्तिश्लेष सों अर्थ फिरै तब होय।

यथा।

धर्मसीलता तब जग जागी।
पावा दरस हमहु बड़भागी॥

एक अर्थ हम बड़े भाग्यवान दूसरो हमार भाग बड़ो घटो, जैसे दिया बढ़ाय देव सो घटिबे को अर्थ।

अथ स्वभावोक्ति।

सुभावोक्ति जहँ जानिये बरनो जाय सुभाय।

यथा।

राम सुभाव चले गुरु पाहीं।
सियसनेह बरनत मनमाहीं॥

अथ भाविक लक्षण।

भाविक भूत भविष्य जो परतछ कहत बनाय।

यथा ।

खोजत रह्यों तोहि सुतघाती ।
आजु निपाति जुड़ावों छाती ॥

अथ उदात ।

सो उदात जहँ वरनिये सम्पति को अधिकार ।

यथा ।

जेहि तिरहुत तेहि समय निहारी ।
तेहि लघु लाग भुवन दसचारी ॥

अथ अत्युक्ति ।

अद्भुत झूठी वरनिये जहँ अत्युक्ति प्रमान ।

यथा ।

सर्वस दान दीन सब काहू ।
जेहि पावा राखा नहि ताहू ॥

अथ निरुक्ति ।

सो निरुक्ति जहँ जुक्ति सो अर्थकल्पना आन ।

यथा ।

कनककलित अहिबेलि बनाई ।
लखि नहि परै सपर्न सुहाई ॥

इहां नागबेलि को अहिबेलि कह्यो जैसे हाटकलोचन ।

अथ प्रतिषेध लक्षण।

सो प्रतिषेध निषिद्ध जो अर्थ निषेधो जाय।

यथा।

कालनेम सम मैं नहीं, सुनहु बचन हनुमान।

अस कहि।

अथ विधि लक्षण।

अलङ्कार बिधि सिद्ध को अर्थ साधिये फेर।

यथा।

विश्वभरन कर पोषन जोई।
ताकर नाम भरत अस होई॥

अथ हेतु लक्षण।

हेतु अलंकृत दोय जहँ कारन कारज सङ्ग।
कारन कारज ये सबै वस्तु एकहीं रङ्ग॥

प्रथम।

रघुकुलकमल सुजनसुखदाता।
आये कुसल देव मुनित्राता॥

द्वितीय।

"जहँ लगि जगत सनेह सगाई"।
ते "मोरे सबै एक तुम स्वामी" लों॥

इति अर्थालङ्कार।

अथ शब्दाअलङ्कार—तहां प्रथम रीति लक्षण ।

चमत्कारचन्द्रिका में—दोहा ।

गौड़ी वैदर्भी कहत पुनि पञ्चाली जान ।
लाटी ओज प्रसाद पुनि माधुर्जंहि की खान ॥

यह चारहूँ रीत में ओज प्रसाद माधुर्य्य ये तीन गुन उपजत हैं। जैसे भरत के मत में ध्वनि काव्य आत्मा तैसे वामन के मत में रीत आत्मा।

अथ गौड़ी लक्षण ।

यदि संजोगी वर्ण जहँ होहि सु बड़ो समास ।
छन्दबन्ध रचना करै तहँ गौड़ी को वास ॥

याको परुषावृत्ति कहत हैं सो गौड़ी में मिलत है ।

अथ समास लक्षण ।

जो सो को करि लिये ते को मे ओ नहीं होय।
यहै सु जाके अर्थ में लहि समास है सोय ॥

जो सो को करि इत्यादि पद में शब्दसमूह में नाहीं रहै है अर्थ कहत में जानी जाय है ।

जो सो यथा ।

पीत झीन झँगुली तन सोहहि ।

पीत जो झिंगुली सो तन में सोहै ।

को यथा ।

राम गये बन प्रान न जाहीं ।

इहाँ राम बन को गये ।

करि यथा ।

"लोग प्रेमबस ।" इहाँ प्रेम कर बस जानो ।

के यथा ।

"रामहेतु ।" इहाँ राम के हेतु ।

ते यथा ।

"रामसुमुख निकसे बचन ।"

इहाँ राममुख ते निकसे बचन जानिये ।

इत्यादि ।

अथ गौडी ओज गुन यथा ।

कटकटाइ कोटिन भट गर्जहिँ ।

वैदर्भी लक्षण ।

कम समास कि समास नहि अक्षर सानुस्वार ।

नहि टवर्ग माधुर्ज गुन वैदर्भी उच्चार ॥

यथा।

कङ्कन किङ्किनि नूपुर बाजहिँ।

अथ पञ्चाली लक्षण।

गौड़ी वैदर्भी मिले पञ्चाली है रीति।
उपजत तहाँ प्रसाद गुन सुकवि लखें करि प्रीति॥

यथा।

सतानन्दपद बन्दि प्रभु हर्षे आसिष पाय।
चलहु तात मुनि कहा तब पठवा जनक बुलाय॥

इहाँ नन्द बन्दि वैदर्भी अरु हर्षे पठवा गौड़ी याते पञ्चाली।

अथ लाटी।

कोमल पद जहँ रहत है उपजत गुन परसाद।

यथा।

खञ्जन मञ्जुल तिरछे नयना।
निज पति कह्यो तिनहि सिय सयना।

लाटी में कोमलावृत्ति अन्तर्भूत है। कोई रीति को सब्दालङ्कार अन्तर्भूत मानत है रीति को "वृत्ति कहत हैं।"

अथ अनुप्रास लक्षण।

स्वर बिनु समता वर्न की अनुप्रास है सोय।

स्वर की समता होय वा न होय यह आग्रह नहीं वरनन की समता चाही।

अथ छेकाऽनुप्रास लक्षण।

जहाँ सवर्न अनेक की इकबेर समता होय।

ताको छेका कहत हैं।

यथा।

अम्भोजअम्बकअम्बउमगसुअङ्गपुलकावलिछई।

इहाँ एक वर्न अकार बकार की एकबार समता है॥

अथ वृत्ति अनुप्रास लक्षण।

वृत्ति एक बहु बरन की बहु बिर समता मान।

यथा।

चहत पुरानन से जि सो आनन देखो रूप।

कही सुजानन जगत में एक ईश्वरी भूप॥

इहाँ एक नकार बहु बार आयो।

अब लाटा लक्षण।

अर्थ सहित जहँ पद फिरै भाव भेद तहँ होय।

सो लाटानुप्रास है भाषत कवि सब कोय॥

यथा ।

सान प्रसिद्ध कृपान प्रसिद्ध सुश्रान प्रसिद्ध प्रसिद्ध परायन ।
मान प्रसिद्ध जु दान प्रसिद्ध प्रसिद्ध सदा सरदार उपायन ॥
सील प्रसिद्ध सु डील प्रसिद्ध सु सत्य प्रसिद्ध प्रसिद्ध सुभायन।
ज्ञान प्रसिद्ध प्रवान प्रसिद्ध जु धाम प्रसिद्ध प्रसिद्ध नरायन ॥

अथ जमक लक्षण ।

जमक शब्द ओही रहै अर्थ जुदो ह्वै जाय ।

यथा ।

सुजस सरस द्विजराज ते कियो पाल द्विजराज।
भूप ईश्वरीसिंह नित दाटत सिंह समाज ॥
उदाहरन भूषनन के लिखे मिले जे आन ।
जो न मिले ते धरि दये तुलसी भूषन जान॥
पद पखार जल पान करि आप सहित परिवार।
तन त्याग्यो रघुबर बिरह राउ गयो सुरधाम ॥
रामराम कहि राम कहि रामराम कहि राम ।
तन त्याग्यो रघुबर बिरह राउ गये सुरधाम ॥

अथ पिङ्गल गीति ।

प्रथम गन नाम ।

मगन नगन भनि भगन अरु यगन सदा सुभ जान।
जगनरगनलुसगनपुनि तगनजुत्रसुभबखान ॥

लक्षण ।

मगन तीन गुरु जानिये नगन तीन लघु होय ।
भगन आदिगुरु आदिलघु यगन कहैं सब कोय ॥
जगन मध्य गुरु जानिये रगन मध्य लघु होय ।
सगन अन्तगुरु अन्तलघु तगन कहैं सब कोय ॥

अथ गन देवता ।

मही देवता मगन को नाग नगन को लेखि ।
जलजो जानो यगन को चन्द भगन को देखि ॥
सूरज जानो जगन को रगन अगिनि महँ मानि।
काल समुझिये सगन को तगन अकास बखान ॥

अथ गन फल ।

भूमि सुख, नाग आनन्द, मङ्गल चन्द, जलजो बुधिबुध, सूरज सुख सोखे, अग्नि अङ्ग दाहै, काल देस उदास, अकास सुन्न ।

अथ गन जाति ।

मगन नगन ये मित्र हैं भगन यगन ये दास ।
उदासीन ज त जानिये र स रिपु केसोदास ॥

अथ मात्रा प्रस्तार।

देहु प्रथम गुरु के तरे लघु पुनि सम करि पाँति।
उबरे गुरु लघु दीजिये सब लघु लों या भाँति॥

मात्रा नष्ट।

पूरब क्रम ते अङ्क दै लिखि सब कला बनाय।
सेष अङ्क में प्रगट पुनि पूछो अङ्क मिटाय ॥
उबरे अङ्क जु पुनि तहाँ ता नीचे की मत्त ।
पर मत्तालय होय गुरु नष्ट कहै अनुरत्त ॥

नष्ट उद्दिष्ट।

अन्त अङ्क में गुरु सिर के अङ्क घटाइये जैसे एकईस में तीन + आठ = ग्यारह गये दस रहे यह दसवां भेद।

अथ मात्रा मेरु।

द्वै द्वै कोठा सम लिखहु एक अङ्क ता अन्त ।
आदि एक इक बीच दै गनती करहु अनन्त ॥
सीस अंक ता सीस के पर जुग अंक मिलाय।
सूनो कोठा पूरिये मत्त मेरु हो जाय ॥

अथ मात्रा पताका लक्षण।

जै लकीर पताका ल्यावै खण्डमेरु ताको अलगावै।
ताहीसंख्याकोठाकरियेनामपताकापाँतीधरिये।
पुरुब जु अलसर अंक भिन्न लिखि देखिये।
अन्त अंक इक अंक कोठ तेहि रेखिये॥
तासे क्रम ते इक इक अङ्क घटाइये।
वा ढिग अध ते द्वितिय पँगति लिखि जाइये॥
तृतिय पंगति में द्वे द्वे जोरि कमी करो।
चौथि पँगति में तीन तीन चित में धरो॥
इन भाँतन प्रति पंगत इक बढ़ अङ्क जू।
घटै पताका रूप लिखौ निरसंक जू॥

मात्रा मर्कटी लक्षण—दोहा।

क्रम उद्दिष्ट गुन तीसरी पादहीन भरचार।
वह पद पञ्चम हान चौछठही भर निरधार॥

अथ वरन प्रस्तार बरवा।

गुर पहिले तर लघु धर सम करि पाँत।
गुर ते पूरन लघु लौं लिखि या भाँत॥

अथ वर्णनष्ट - दोहा ।

नष्ट वरन में भाग करि सम भागनि लघु आन ।
विषम एक दै भाग करि पुनि तासै गुरु ठान ॥

वार्त्ता ।

सम बूझै तौ लघु दीजै विषम तौ गुरु इच्छा परजन्त गुरु तै पूरन कीजै ।

नष्टरूप अथ वरन उद्दिष्ट—दोहा ।

लिखि पूछे पर अंक ते दून दून लिखि देहु ।
लघु सिर अङ्कनि जोरि कै एक मिला कहि देहु ॥

अथ वर्णन मेरु छप्पै ।

प्रथम जुगल पुनि तीन चार इमि कोठा कीजै ।
आदि अंत दुहुँ ओर एक इक अंक धरीजै ॥
सिखर अंक जुग जोरि बहुरि तर कोठा ठहिए ।
पंगत पंगत जोरि तासु ते भेद सु कहिए ॥
तरअंतसकललहुतासुउपवियएकगुरतीजेद्विगुरु ।
जहँअंकजौनतहँतेतिकगुरवरनसैलरचनासुकुरु ॥

रूप वरन मेरु का—पताका लच्छन ।

वरन पताका पहिलही दै उद्दिष्ट क्रम अंक ।
पर अंकन भरिये बहुरि लै पूरब के अंक ॥

पहिलेही जो पाइये तजिये ताही अंक ।
करि गनती प्रस्तार की जानि लेहु निरसंक ॥

अथ वर्न मर्कटी ।

षट कोठा करि आदि क्रम सुगुन दूसरी पाँति ।
आदिहि सो गुन दूसरी लिखिये चौथी पाँति ॥
चौथी को आधी पँगति पचईं छठईं होय ।
पचई चौथी को मिला पाँति तीसरो जोय ॥

वर्न मर्कटी रूप—अथ छन्द ।

श्रीछन्द आदि सब छन्द लिखे ग्रन्थ विस्तार होत अरु रामायन में प्रयोजन नाहीं । यातें दोहा सोरठा चौपाई गीतका को लच्छन लिखियतु है ॥

दोहा ।

तेरह ते ग्यारा जहां पुनि सो रीत निबाहि ।
सोई पिंगल के मते दोहा छन्द कहाहि ॥
अरु दोहा उलटे सोरठा होत है ।

चौपाई लच्छन ।

सोरह मत्ता छन्द गति रूप चौपई लेखि ।
पन्द्रह से सत्तानबे जानो भेद बिसेषि ॥

गीतिका लच्छन ।

अट्ठाइस में गीतिका आदिक कह्यो फनीस ।
पाँच लाख चौदह सहस द्वैसे पर उनतीस ॥

दोहा ।

फल अकाश ग्रह आतमा माघ शुक्ल बुधवार ।
काशीपति की कृपा तें किय पूरन विस्तार ॥

छप्पै ।

श्रीकाशी के नाथवीर वलवण्ड उजागर ।
ताकी वाट महीप भए सुखमा गुनसागर ॥
तासु पुत्र उद्दितमहीप पुनि दीपनरायन ।
है प्रसिद्ध सब जगत एक ते एक सुभायन ॥
सरदार तासुसुतईश्वरी भूपतिमनि जसचंदसो ।
विलसतविचित्रकाशीपुरी अद्भुतआनँदकन्दसो॥

सोरठा ।

मानस कियो रहस्य, कृपा कोर तिनकी तकत ।
सुमिरन राम अवस्य, काव्य कला के मिस भयो ॥

दोहा ।

सुख बिलास सज्जन करैं दुरजन जरैं हमेस ।
यह विचार सरदार कबि कीन्हों कछू कलेस ॥

इति श्रीमहाराजाधिराजकाशीराज श्रीमदी-श्वरीप्रसादनारायणस्याभिगामीकृष्णप्रियापुरवा-सीहरिजनकवीश्वरात्मजेन सरदाराख्यकवीश्वरे-णविरचिते मानसरहस्ये साहित्यसंपूर्णम् ।

दोहा ।

उनइस सौ एकइस वुधे द्वादसि सित वैसाख ।
छपी नकल सैं लिखि चुक्यों महादेव हरि भाष ॥

॥ इति ॥